आफरी दर्पण

वन अनुसंधान, शिक्षा एवं विस्तार की त्रैमासिक पत्रिका

जुलाई-दिसम्बर, 2025

वर्ष 23, अंक 03-04

संरक्षक
डॉ. आशुतोष कुमार त्रिपाठी
निदेशक

सह-संरक्षक
डॉ. संगीता सिंह
समूह समन्वयक (शोध)

संपादक मंडल
डॉ. बिलास सिंह, श्रीमती कुसुम लता परिहार
श्री अमीन उल्लाह खान, श्री अजय वशिष्ठ

विशेष सहयोग
श्री धानाराम

भा.वा.अ.शि.प.-शुष्क वन अनुसंधान संस्थान

(ICFRE - ARID FOREST RESEARCH INSTITUTE)

(भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद्, देहरादून,
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार की एक स्वायत्त संस्था)
जोधपुर (राजस्थान) - 342 005

Web Site: http://afri.icfre.gov.in

E-mail: dir_afri@icfre.org

निदेशक की कलम से ....

प्रिय पाठकों, नमस्कार !

आफरी दर्पण के दो संयुक्त अंकों की प्रति पाठकों के लिए प्रस्तुत है। इस प्रति में संस्थान के युवा वैज्ञानिकों द्वारा ज्ञानवर्धक एवं रोचक लेख प्रस्तुत किये गए हैं।

भारत भूजल का सर्वाधिक दोहन करने वाले राष्ट्रों में एक है। कई स्थानों पर भूजल का दोहन उसकी पुनर्भरण दर से अधिक हो रहा है, पारंपरिक जल स्रोत सुख रहे हैं। शोधित अपशिष्ट जल, भारत में बढ़ते जल संकट से निपटने की क्षमता रखने वाला एक विश्वसनीय एवं सतत गैर-पारंपरिक जल स्रोत है। इससे सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण लेख इस अंक में शामिल है। सीता माता वन्य जीव अभयारण्य एकल वन परिदृश्य में मृदा विविधता, चन्दन की खेती-महत्व एवं चुनौतियाँ, गिर राष्ट्रीय उद्यान की पारिस्थितिकी एवं वनस्पतिकीय विविधता विषयों पर ज्ञानवर्धक एवं रोचक जानकारी भी इस अंक में दी गई है। राजस्थान के शुष्क वनों में पुनर्स्थापना की रणनीतियाँ, लेख में राजस्थान के शुष्क वनों में पुनर्स्थापन केवल वृक्षारोपण या भूमि सुधार का कार्य नहीं है, बल्कि यह पारिस्थितिकी, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन स्थापित करने की एक व्यापक प्रक्रिया को विस्तार से बताया गया है। चांगेरी या तीन पत्तियाँ नामक पौधे के औषधीय गुणों को विस्तार से बताया गया हैं, इसके फूल, पत्तियाँ और बीज स्वास्थ्य के लिये बहुत ही गुणकारी होते हैं।

प्रस्तुत अंक में संस्थान द्वारा समय समय पर आयोजित हुई विभिन्न गतिविधियों का संक्षिप्त विवरण भी प्रस्तुत किया गया हैं। आशा है कि यह अंक पाठकों के लिए रुचिकर और ज्ञानवर्धक सिद्ध होगा। इस पत्रिका में विज्ञान/वानिकी/पर्यावरण से संबंधित लेख, शोध-कार्य और कविताएँ प्रकाशित कराने हेतु पत्रिका में दिए गए पते पर ईमेल/डाक द्वारा भेजी जा सकती हैं।

शुभकामनाओं सहित,

(डॉ. आशुतोष कुमार त्रिपाठी)

पर्यावरण की सोंधी खुशबू

हर सुबह में चुनता हूँ
रंग-बिरंगे फूलों को,
कभी गेंदा, कभी गुलाब,
कभी चमेली की खुशबू को।

इन फूलों से सजता है आँगन,
मन भी हो जाता है स्वच्छ,
प्रकृति देती है सीख हमें,
जीना सरल, शांत और श्रेष्ठ।

जब रोज मैं फूल सजाता हूँ,
धरती नाता जुड़ जाता है,
पर्यावरण की रक्षा का संकल्प
मेरे मन में बस जाता है।

पत्तों की हरियाली कहती है,
मुझे यूँ ही रहने दो,
न काटो, न मुरझाने दो,
मुझसे जीवन का अर्थ लो।

आओ हम सब मिलकर ठान लें,
पेड़ लगाएँ, जल बचाएँ,
फूलों, पत्तों, नदियों संग मिलकर
इस धरती को स्वर्ग बनाएँ।

यशपाल सोलंकी
आफरी, जोधपुर

आवरण चित्र : गिर राष्ट्रीय उद्यान का विहंगम दृश्य (आभार : डॉ सचिन शर्मा एवं डॉ. अदिति टेलर) के सौजन्य से

शोधित अपशिष्ट जल : सतत जल प्रबंधन के लिए एक गैर-पारंपरिक जल स्रोत

अतहर परवेज (वैज्ञानिक-बी), विस्तार प्रभाग, मनोरथ सेन (वैज्ञानिक-बी), वन संवर्धन एवं वन प्रबंधन प्रभाग

शरद कोठारी, (वैज्ञानिक-बी), वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग

परिचय

वैश्विक स्तर पर जल की मांग में वृद्धि, जलवायु परिवर्तन के प्रभावों तथा अपर्याप्त जल प्रबंधन के कारण जल आपूर्ति पर निरंतर दबाव बढ़ रहा है जिसके चलते जल संकट और अधिक गंभीर होता जा रहा है।

इसमें जल गुणवत्ता में गिरावट एवं उपलब्ध स्वच्छ जल संसाधनों का अत्यधिक दोहन भी शामिल है।

भारत भूजल का सर्वाधिक दोहन करने वाले राष्ट्रों में एक है। कई स्थानों पर भूजल का दोहन उसकी पुनर्भरण दर से अधिक हो रहा है, सतही जल स्रोत दबाव में हैं तथा पारंपरिक जल स्रोत सूखे के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हो गए हैं। अनुमान है कि विश्व की लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या सिंचाई के लिए जल संकट का सामना कर रही है। जल की कमी के साथ-साथ मीठे जल के दोहन और उपभोग के परिणामस्वरूप बड़ी मात्रा में अपशिष्ट जल का उत्पादन भी हो रहा है। इस प्रकार का जल प्रदूषण, उपयोग योग्य स्वच्छ जल की मात्रा को कम करके जल संकट को और गंभीर बना देता है। जल संकट के सभी प्रकार से गंभीर आर्थिक एवं सामाजिक दुष्परिणाम होते हैं।

अत: कृषि एवं अन्य क्षेत्रों के लिए जल संसाधनों के प्रभावी एवं सतत प्रबंधन हेतु एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन आवश्यक है। स्वच्छ जल स्रोतों की कमी ने विशेष रूप से सिंचाई के लिए अपशिष्ट जल के पुन: उपयोग को बढ़ावा दिया दिया है। अपशिष्ट जल तेजी से बढ़ती मानव जनसंख्या के लिए खाद्य उत्पादन बढ़ाने एवं स्वच्छ जल पर निर्भरता कम करने हेतु एक गैर-पारंपरिक संसाधन बनता जा रहा है। शोधित अपशिष्ट जल का पुन: उपयोग एक प्रभावी उपाय है, जो उपचार प्रौद्योगिकी की दक्षता और प्रभावशीलता के आधार पर सतत, जलवायु-अनुकूल जल प्रबंधन में योगदान कर सकता है।

निर्धारित मानकों के अनुरूप शोधित अपशिष्ट जल का उपयोग शुष्क मौसम में भी नदियों के सतत प्रवाह को बनाए रखने के लिए किया जा सकता है। कुछ आवश्यक पोषक तत्वों से युक्त अपशिष्ट जल को भूजल की तुलना में सिंचाई के लिए अधिक विश्वसनीय संसाधन माना गया है। शोधित अपशिष्ट जल उन अनेक उपयोगों में स्वच्छ जल का विकल्प बन सकता है, जहाँ जल की गुणवत्ता की आवश्यकता नहीं होती।

इससे नदियों और जलभृतों पर दबाव कम होता है तथा शहरी हरितीकरण, औद्योगिक प्रक्रियाओं, भूजल पुनर्भरण एवं सुरक्षित उप-शहरी कृषि जैसे अनेक सह-लाभ प्राप्त होते हैं। वर्तमान में ऐसी तकनीकें उपलब्ध हैं जो उपयोग के अनुसार विभिन्न गुणवत्ता स्तरों का जल उपलब्ध करा सकती हैं, जैसे- सिंचाई, औद्योगिक शीतलन एवं धुलाई, परिदृश्य सिंचाई, भूजल पुनर्भरण तथा उन्नत शुद्धिकरण के बाद अप्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष पेयजल पुन: उपयोग।

भारत में अपशिष्ट जल के उपयोग की वर्तमान स्थिति

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) के अनुसार भारत में जल निकायों के प्रदूषण का प्रमुख स्रोत शहरों से निकलने वाला अनुपचारित घरेलू सीवेज है। जून 2020 तक भारत के शहरी क्षेत्रों से घरेलू सीवेज उत्पादन 72,368 MLD (Mega Liters per Day) आँका गया, जिसमें से केवल 20,235 MLD (लगभग 28 प्रतिशत) शोधित सीवेज का उपयोग किया जा रहा था। राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन की वेबसाइट पर 31.10.2024 की रिपोर्ट के अनुसार, राजस्थान में घरेलू सीवेज का अनुमानित उत्पादन 1649.95 MLD है, जबकि मौजूदा उपचार क्षमता 1412.48 MLD है, जिसमें से वर्तमान में केवल 1047.54 MLD क्षमता का ही उपयोग हो रहा है। वर्तमान में अधिकांशत: अल्प-शोधित एवं अनुपचारित अपशिष्ट जल का ही उपयोग किया जा रहा है। शोधित अपशिष्ट जल के अनेक गैर-पेय उपयोग हैं, जैसे-कृषि, भूजल पुनर्भरण, गोल्फ कोर्स सिंचाई, वाहन धुलाई, शौचालय फ्लशिंग, अग्निशमन तथा भवन निर्माण गतिविधियाँ इनमें कृषि सिंचाई वह क्षेत्र है जहाँ शोधित अपशिष्ट जल का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। वैश्विक स्तर पर कृषि भूमि की सिंचाई में शोधित अपशिष्ट जल का उपयोग लाखों छोटे किसानों की आजीविका का आधार है। सीमित स्वच्छ जल उपलब्धता से निपटने के लिए शुष्क क्षेत्रों में इसका महत्व लगातार बढ़ रहा है।

कृषि में शोधित अपशिष्ट जल के उपयोग के मामले में इजराइल विश्व का अग्रणी देश है। वर्ष 2015 में इजराइल 86 प्रतिशत (400 मिलियन घन मीटर) शोधित अपशिष्ट जल का पुनर्चक्रण कर रहा था, जिससे देश की सिंचाई जल आवश्यकता का 50 प्रतिशत पूर्ति हो रही थी एवं इसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में 1600 प्रतिशत की वृद्धि हुई। CPCB द्वारा प्रकाशित सीवेज उपचार संयंत्रों की सूची के अनुसार भारत में केवल 3 प्रतिशत शोधित अपशिष्ट जल का ही पुन: उपयोग किया जा रहा है। हालाँकि, शोधित अपशिष्ट जल के उपयोग की उपयुक्तता अब भी एक विचारणीय विषय बनी हुई है। इसके लाभों के साथ-साथ विश्वभर में शोधकर्ताओं द्वारा सिंचाई में

इसके नकारात्मक प्रभावों पर भी अध्ययन किया गया है। शोधित अपशिष्ट जल से सिंचाई के कारण मृदा के सूक्ष्मजीव समुदाय, बनावट, pH, विद्युत चालकता, पोषक तत्वों एवं भारी धातुओं के संचय पर प्रभाव की रिपोर्ट दर्ज की गई है। इन कमियों को प्रदूषकों एवं रोगजनक सूक्ष्मजीवों के संदर्भ में अपशिष्ट जल की नियमित निगरानी, मृदा गुणवत्ता की निगरानी तथा कृषि उत्पादों में सूक्ष्मजीवी एवं भारी धातु संदूषण की जाँच से कम किया जा सकता है। अनुसंधान यह भी दर्शाता है कि द्वितीयक उपचार के बाद यदि शोधित अपशिष्ट जल निर्धारित मानकों को पूरा करता है, तो दीर्घकालिक सिंचाई के बावजूद कोलीफॉर्म जीवाणुओं की सांद्रता पारंपरिक सिंचाई स्रोतों की तुलना में कम रहती है।

इसके अतिरिक्त, अनेक देशों में स्वच्छ जल की कमी, अपर्याप्त उपचार सुविधाओं, उच्च उपचार लागत, अधिक पोषक तत्व सामग्री तथा कृषि क्षेत्र में वृद्धि के कारण अनुपचारित अपशिष्ट जल से सिंचाई व्यापक रूप से की जाती है। इसके कारण रोगजनकों की उपस्थिति, खाद्यान्न में उनका संचरण तथा मृदा एवं पौधों में भारी धातुओं के संचय का खतरा होता हैं। अनुपचारित या आंशिक रूप से शोधित अपशिष्ट जल से सिंचाई के मृदा के भौतिक एवं रासायनिक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव भी देखे गए हैं।

भारत में वनीकरण हेतु शोधित अपशिष्ट जल के पुनः उपयोग की संभावनाएँ

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि विशेषकर शुष्क क्षेत्रों में स्वच्छ जल की कमी के कारण शोधित अपशिष्ट जल का 100 प्रतिशत उपयोग कृषि, वानिकी एवं अपशिष्ट जल प्रबंधन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकता है।

वर्षभर सिंचाई जल की सुनिश्चित उपलब्धता के साथ-साथ यह पर्यावरणीय दृष्टि से अपशिष्ट जल के सुरक्षित निपटान का भी माध्यम बनेगा।

शुष्क क्षेत्रों में, जहाँ जल की अत्यधिक कमी होती है, यह वनीकरण गतिविधियों के लिए विशेष रूप से शुष्क मौसम में पौधों के रोपण हेतु एक सुरक्षित जल स्रोत सिद्ध हो सकता है। कुछ अध्ययनों के अनुसार शोधित घरेलू अपशिष्ट जल में फॉस्फोरस, नाइट्रोजन, पोटैशियम एवं सल्फर जैसे पोषक तत्व होते हैं, जिन्हें पौधे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं एवं इससे मृदा उर्वरता में सुधार होता है। अतः वनीकरण में शोधित अपशिष्ट जल का उपयोग एक सुरक्षित विकल्प है, क्योंकि वन वृक्ष एवं झाड़ी प्रजातियाँ उच्च वृद्धि दर एवं अधिक जैव-द्रव्यमान उत्पादन क्षमता रखती हैं। साथ ही, इनका खाद्य श्रृंखला से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं होता, जिससे जोखिम न्यूनतम रहता है।

उप-शहरी और परि-शहरी क्षेत्रों में भूमि की उपलब्धता के कारण शोधित अपशिष्ट जल का उपयोग विशेष रूप से उपयोगी हो सकता है। इन क्षेत्रों में जल संग्रह एवं उपचार अवसंरचना (Infrastructure) कमजोर होने के कारण स्वच्छता एवं जल प्रदूषण की समस्याएँ अधिक होती हैं। इस अंतर को निर्मित आर्द्रभूमि, फ्लोटिंग ट्रीटमेंट वेटलैंड्स (FTWs) एवं उच्च-दर शैवाल तालाब जैसी कम-लागत एवं प्रकृति-आधारित उपचार प्रणालियों की स्थापना से पाटा जा सकता है। इससे न केवल पर्यावरणीय और स्वच्छता स्थितियों में सुधार होगा बल्कि वानिकी कार्यों के लिए वर्षभर शोधित जल भी उपलब्ध होगा।

निष्कर्ष

शोधित अपशिष्ट जल भारत में बढ़ते जल संकट से निपटने की क्षमता रखने वाला एक विश्वसनीय एवं सतत गैर-पारंपरिक जल स्रोत है। जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, जलवायु परिवर्तन एवं भूजल के अत्यधिक दोहन के कारण स्वच्छ जल संसाधनों पर बढ़ता दबाव वैकल्पिक जल प्रबंधन उपायों की आवश्यकता को रेखांकित करता है। यद्यपि घरेलू सीवेज की बड़ी मात्रा उत्पन्न होती है परंतु सीमित उपचार एवं पुनः उपयोग न होने के कारण पर्यावरणीय प्रदूषण एवं संसाधन की हानि होती है। वनीकरण में शोधित अपशिष्ट जल सुनिश्चित सिंचाई एवं आवश्यक पोषक तत्व प्रदान कर मृदा उर्वरता एवं जैव-द्रव्यमान उत्पादन को बढ़ाता है। वन वृक्ष एवं झाड़ियों के खाद्य श्रृंखला से बाहर होने के कारण इसका उपयोग विशेषकर शुष्क और परि-शहरी क्षेत्रों में अधिक सुरक्षित एवं प्रभावी है। हालाँकि, सुरक्षित एवं सतत उपयोग के लिए उपचार मानकों का पालन, नियमित निगरानी एवं उचित प्रबंधन अनिवार्य है। अतः शोधित अपशिष्ट जल का पुनः उपयोग अपशिष्ट जल को पर्यावरणीय समस्या से बदलकर सतत जल प्रबंधन एवं पारिस्थितिक तन्त्र का एक मूल्यवान संसाधन बना सकता है।

एकल वन परिदृश्य में मृदा विविधता

सीतामाता वन्यजीव अभयारण्य से प्राप्त अंतर्दृष्टि

शरत कोठारी (वैज्ञानिक-बी) वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग, मनोरथ सेन, (वैज्ञानिक-बी) वन संवर्धन एवं वन प्रबंधन प्रभाग, बुंदेश कुमार (तकनीशियन) वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग

परिचय : वन्यजीवों से परे एक अभयारण्य

राजस्थान के दक्षिण-पूर्वी भाग में स्थित सीतामाता वन्यजीव अभयारण्य राज्य के सबसे अधिक पारिस्थितिक रूप से जटिल वन परिदृश्यों में से एक है। यह अभयारण्य प्रतापगढ़ और चित्तौड़गढ़ जिलों के कुछ भागों में फैला हुआ है तथा अरावली पर्वतमाला और मालवा पठार के पारिस्थितिक संगम क्षेत्र में स्थित है। सीतामाता को सामान्यतः उसके वन आवरण, वन्यजीवों और सांस्कृतिक महत्व के लिए जाना जाता है किंतु इसका एक कम चर्चित परंतु अत्यंत महत्वपूर्ण पक्ष इसकी असाधारण मृदा विविधता है। एक ही संरक्षित क्षेत्र के भीतर चार भिन्न मृदा वर्ग वर्टीसोल, एल्फीसोल, इनसेप्टिसोल तथा भूरी वन मृदा का निकट स्थानिक सहअस्तित्व अत्यंत दुर्लभ है। यह स्थिति अर्ध-शुष्क से उप-आर्द्र वन पारिस्थितिकी तंत्र में मृदा-वनस्पति-स्थलाकृति अंतःक्रियाओं को समझने के लिए एक उत्कृष्ट प्राकृतिक प्रयोगशाला उपलब्ध कराती है।

भूदृश्य, जलवायु एवं भौतिक भूगोल

सीतामाता वन्यजीव अभयारण्य का भू-आकृतिक स्वरूप तरंगित से मध्यम रूप से विच्छिन्न है, जहाँ ऊँचाई समुद्र तल से लगभग 300 से 600 मीटर के बीच पाई जाती है। यह क्षेत्र उष्णकटिबंधीय मानसूनी जलवायु के अंतर्गत आता है, जिसमें ग्रीष्म ऋतु अत्यधिक गर्म, दक्षिण-पश्चिम मानसून स्पष्ट रूप से परिभाषित तथा शीत ऋतु सामान्यतः हल्की होती है। यहाँ वार्षिक वर्षा सामान्यतः 700 से 900 मि.मी. के बीच होती है, जिसका अधिकांश भाग जुलाई से सितंबर के मध्य प्राप्त होता है। अभयारण्य कई मौसमी एवं कुछ स्थायी नालों से अपवाहित होता है, जो अंततः माही नदी तंत्र में योगदान करते हैं। अभिभावक शैल (parent material), अपवाह स्थितियों, ढाल तथा अपक्षय की विभिन्न अवस्थाओं की भिन्नता ने मिलकर इस क्षेत्र में पाई जाने वाली उल्लेखनीय मृदा विविधता को दिया है।

वनस्पति एवं जीव-जंतु संदर्भ

अभयारण्य में शुष्क पर्णपाती से आर्द्र पर्णपाती वन प्रकार पाए जाते हैं। सागौन (*Tectona grandis*) बड़े क्षेत्रों में प्रमुख वृक्ष प्रजाति है, जो प्रायः *Terminalia, Anogeissus, Madhuca* तथा *Boswellia* प्रजातियों के साथ सहवर्ती रूप में पाया जाता है। नमी वाले क्षेत्रों एवं जलधाराओं के समीप अधिक सघन एवं ऊँचे वन खंड विकसित होते हैं, जिन्हें बेहतर मृदा-आर्द्रता स्थितियाँ संबल प्रदान करती हैं।

सीतामाता वन्यजीव अभयारण्य उड़न गिलहरी, तेंदुआ, लकड़बग्घा, चीतल, सांभर, जंगली सूअर तथा पक्षियों और सरीसृपों की समृद्ध विविधता के लिए भी प्रसिद्ध है। उल्लेखनीय है कि वनस्पति का वितरण और उत्पादकता सीधे तौर पर मृदा की गहराई, बनावट, जल-धारण क्षमता और पोषक-तत्व उपलब्धता से जुड़े हुए हैं, जो इन चारों मृदा प्रकारों में पर्याप्त रूप से भिन्न पाया जाता जाता है।

एक अनोखी विशेषता : एक अभयारण्य में चार प्रमुख मृदा प्रकार

अधिकांश वन क्षेत्रों के विपरीत जहाँ एक या दो मृदा वर्ग प्रमुख होते हैं, सीतामाता वन्यजीव अभयारण्य में चार प्रमुख मृदा प्रकार पाए जाते हैं। काली मृदा (वर्टीसोल), लाल मृदा (एल्फीसोल), भूरी वन मृदा, जलोढ़ मृदा (इनसेप्टिसोल)

प्रत्येक मृदा प्रकार अपनी विशिष्ट उत्पत्ति प्रक्रिया को दर्शाता है तथा अलग-अलग वनस्पति संरचनाओं और पारिस्थितिक कार्यों को संबल प्रदान करता है।

काली मृदा (वर्टीसोल)

काली मृदा (वर्टीसोल)

सीतामाता में वर्टीसोल मुख्यतः बेसाल्टिक या अन्य क्षारीय अभिभावक शैलों से निर्मित हुई है। ये सामान्यतः समतल या हल्की ढाल वाले क्षेत्रों में पाई जाती हैं जहाँ महीन कणों का संचयन होता है। इन मृदाओं में स्मेक्टाइट प्रधान चिकनी मिट्टी की अत्यधिक मात्रा होती है जिसके कारण तीव्र

सिकुड़न-फूलन (shrink-swell) गुण विकसित होते हैं। शुष्क काल में इनमें गहरी एवं चौड़ी दरारें बनती हैं, जबकि मानसून के दौरान आंतरिक अपवाह मंद रहता है। इनमें कैल्शियम और मैग्नीशियम जैसे क्षारधातु प्रचुर मात्रा में होते हैं तथा कैटायन विनिमय क्षमता अधिक होती है। हालांकि, वन आवरण के अंतर्गत जैविक कार्बन और नाइट्रोजन की मात्रा सामान्यत: मध्यम रहती है, जबकि फॉस्फोरस की उपलब्धता कैल्शियम एवं चिकनी मिट्टी द्वारा स्थिरीकरण के कारण सीमित होती है। USDA मृदा वर्गीकरण के अनुसार इन्हें वर्टीसोल वर्ग में रखा जाता है। ये मृदाएँ उपयुक्त अपवाह स्थितियों में वृक्षों की सशक्त वृद्धि को सहारा देती हैं, किंतु मौसमी जलभराव और दरारें जड़ विकास को प्रभावित कर सकती हैं।

लाल मृदा (एल्फीसोल)

लाल मृदा (एल्फीसोल)

सीतामाता की लाल मृदाएँ स्फटिकीय एवं अवसादी शैलों के दीर्घकालिक अपक्षय से अच्छी अपवाह स्थितियों में विकसित हुई हैं तथा सामान्यत: ऊँचे भू-भागों एवं कोमल ढालों पर पाई जाती हैं। इनमें लौह ऑक्साइड की परतों के कारण विशिष्ट लाल रंग दिखाई देता है। इनकी बनावट बलुई दोमट से चिकनी दोमट तक होती है तथा अपवाह मध्यम से अच्छा होता है। उर्वरता की दृष्टि से ये मृदाएँ मध्यम उर्वर होती हैं किंतु इनमें जैविक कार्बन, नाइट्रोजन और फॉस्फोरस जैसे सामान्यत: सीमित पोषक तत्व होते हैं। USDA वर्गीकरण में इन्हें एल्फीसोल कहा जाता है।पारिस्थितिक दृष्टि से ये मृदाएँ गहरी जड़ वाले वृक्षों के लिए अनुकूल हैं और पर्ण-पतन से प्राप्त जैविक पदार्थ के निरंतर योगदान से वनस्पति को सुदृढ़ बनाती हैं।

भूरी वन मृदा (ब्राउन फॉरेस्ट सॉयल)

भूरी वन मृदाएँ

भूरी वन मृदा वन आवरण के अंतर्गत विकसित हुई है, जहाँ पत्तियों की झड़न और जड़ों के अपघटन से प्राप्त जैविक पदार्थ मृदा निर्माण प्रक्रियाओं को प्रमुख रूप से प्रभावित करता है। ये सामान्यत: सघन वन आवरण तथा छायादार, स्थिर ढालों पर पाई जाती हैं। इनका रंग भूरा से गहरा भूरा होता है व सतही परत में ह्यूमस की प्रचुरता, अच्छी संरचना, उच्च रन्ध्रता तथा संतुलित बनावट पाई जाती है।

इनमें जैविक कार्बन अधिक होता है और पोषक तत्वों की उपलब्धता मुख्यत: सूक्ष्मजीव गतिविधियों पर निर्भर करती है। USDA वर्गीकरण में ये प्राय: इनसेप्टिसोल या एल्फीसोल के अंतर्गत आती हैं। पारिस्थितिक रूप से ये मृदाएँ पोषक-चक्रण, नमी नियमन और वन तंत्र की स्थिरता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

नदी तटीय जलोढ़ मृदा (इनसेप्टिसोल)

सीतामाता की जलोढ़ मृदाएँ नदियों और नालों द्वारा हाल ही में जमा किए गए अवसादों से बनी हैं तथा मुख्यत: बाढ़ मैदानों और निचले क्षेत्रों में पाई जाती हैं। इनकी प्रोफाइल परतदार होती है, जो विभिन्न जमाव घटनाओं को दर्शाती है।

ये मृदाएँ तुलनात्मक रूप से युवा होती हैं, जिनमें मृदा विकास सीमित होता है। USDA वर्गीकरण के अनुसार इन्हें इनसेप्टिसोल कहा जाता है। पोषक-तत्वों की नियमित आपूर्ति के कारण ये क्षेत्र अत्यधिक सघन वनस्पति को अवलंब देते हैं और जैव विविधता के हॉट-स्पॉट के रूप में कार्य करते हैं।

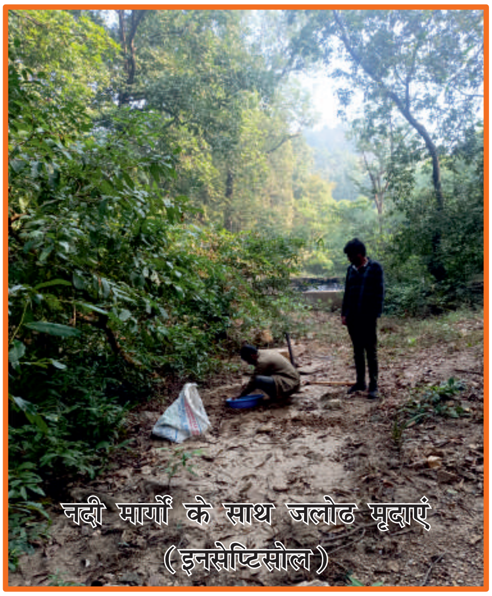
नदी मार्गों के साथ जलोढ मृदाएं (इनसेप्टिसोल)

मृदा विविधता क्यों महत्वपूर्ण है

सीतामाता वन्यजीव अभयारण्य में चार भिन्न मृदा प्रकारों की उपस्थिति पारिस्थितिक एवं प्रबंधन दोनों दृष्टियों से अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह मृदा विविधता

आवासीय भिन्नता को बढ़ाती है, विभिन्न वनस्पति प्रकारों को समर्थन देती है तथा जलवायु परिवर्तन के प्रति पारिस्थितिकी तंत्र की सहनशीलता को सुदृढ़ करती है। मृदाएँ कार्बन भंडारण, जल नियमन तथा पोषक-चक्रण में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। इसलिए इस मृदा-मोजेक को समझना सतत वन प्रबंधन और वन्यजीव संरक्षण के लिए अनिवार्य है। सीतामाता वन्यजीव अभयारण्य केवल जैव विविधता का ही आश्रयस्थल नहीं है बल्कि यह पेडोलॉजिकल (मृदा विज्ञान) विविधता का भी एक अनूठा भंडार है। वर्टीसोल, एल्फीसोल, भूरी वन मृदा और जलोढ़ इनसेप्टिसोल का सहअस्तित्व भूविज्ञान, जलवायु, वनस्पति और मृदा निर्माण प्रक्रियाओं के गहन अंतर्संबंध को दर्शाता है। मृदा को इस पारिस्थितिकी तंत्र के आधारभूत घटक के रूप में स्वीकार करना सीतामाता अभयारण्य को समग्र रूप से समझने में महत्वपूर्ण है तथा यह वन संरक्षण में मृदा विज्ञान को सम्मिलित करने की आवश्यकता को भी रेखांकित करता है।

चन्दन की खेती, महत्व एवं चुनौतियाँ

दिव्य प्रकाश[1], अजित कुमार मौर्य[1] एवं संतोष कुमार साहू[2]

(1 वैज्ञानिक-बी, भा.वा.अ.शि.प- उष्ण कटिबंधीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर)

(2 तकनीशियन, भा.वा.अ.शि.प- उष्ण कटिबंधीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर)

चन्दन, जिसे प्राय: भारत का सुवर्ण सुगंधित (Goldenheart) वृक्ष कहा जाता है, देश की सांस्कृतिक, आर्थिक एवं औषधीय परंपराओं में एक विशिष्ट स्थान रखता है। सन्तालम एल्बम (*Santalum album*) के नाम से वैज्ञानिक जगत में विख्यात यह सुगंधित वृक्ष प्राचीन काल से ही पूजित रहा है। इसकी लकड़ी एवं तेल को इसकी सुगंध, टिकाऊपन एवं औषधीय गुणों के कारण बहुमूल्य माना जाता है। वैदिक अनुष्ठानों से लेकर आधुनिक उपयोगी उत्पादों तक चन्दन का महत्व समय व सीमा से बंधा नही है। प्रस्तुत लेख चन्दन की कृषि की विधियों, इसके सांस्कृतिक एवं औषधीय महत्व, आर्थिक मूल्य तथा इसके संरक्षण में आने वाली कठिनाइयों का विवेचन करता है।

चन्दन की कृषि: एक कला एवं विज्ञान

चन्दन की कृषि एक अत्यन्त सूक्ष्म, समय-साध्य एवं धैर्यपूर्ण प्रक्रिया है, जिसके लिए विशिष्ट ज्ञान तथा अनुकूल जलवायु आवश्यक होती है। यह धीमी गति से बढ़ने वाला सदाबहार वृक्ष है, जो उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पनपता है। भारत के कर्नाटक, तमिलनाडु तथा केरल प्रदेश इसके प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं।

बीज प्रौद्योगिकी

चन्दन (*सैंटालम एल्बम*) के फलों को 20 साल से अधिक पुराने पेड़ों से ताजा एकत्र किया जाता है और पानी में भिगोया जाता है तथा नरम गूदा निकालने के लिए रगड़ा जाता है फिर इसे सुखाया जाता है। बीज को सुखाकर पॉलीबैग या बोरी में संग्रहित किया जाता है। चंदन की प्रति किलोग्राम बीज की संख्या लगभग 6,000 होती है। चन्दन के बीजों को रात भर 0.05 प्रतिशत जिबरेलिक एसिड में भिगोएँ एवं अगले दिवस रोपनी में बोयें।

नर्सरी प्रौद्योगिकी

बीज की क्यारियाँ 3:1 के अनुपात में केवल रेत और लाल मिट्टी से बनाई जाती हैं और नेमाटीसाइड्स (एकलक्स या थिमेट 500 ग्राम प्रति 10 मीटर X 1 मीटर) के साथ अच्छी तरह मिश्रित की जाती हैं। लगभग 2.5 किलोग्राम बीज को क्यारी में समान रूप से फैलाया जाता है तथा पुआल से ढक दिया जाता है, जिसे तब हटा देना चाहिए जब अंकुरों पर पत्तियाँ दिखाई देने लगें। चन्दन, फंगल व नेमाटोड संक्रमण के कारण होने वाली बिमारियों से ग्रस्त हो सकता है। प्रारंभिक लक्षण पत्तियों के मुरझाने और उसके बाद अचानक हरितहीनता और जड़ों के सड़ने का होता है। इसके कारण मृत्यु दर बहुत अधिक होती है, जिसे नेमाटाइड (एकालक्स) और कवकनाशी (डाइथेन) के प्रयोग से नियंत्रित किया जा सकता है। फफूंद के हमले से बचने के लिए बीजों की क्यारियों पर 15 दिनों में एक बार फफूंदनाशक डाइथेन जेड-78 (0.25 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए और नेमाटोड के हमले से बचने के लिए महीने में एक बार 0.02 प्रतिशत एकालक्स घोल का छिड़काव करना चाहिए।

चन्दन अर्ध-परजीवी वृक्ष है एवं इसे पोषण के लिए पोषिता की आवश्यकता होती है। जब अंकुर 4 से 6 पत्तियों की अवस्था में पहुंच जाते हैं तो उन्हें अरहर (*कैजेनस कैजनके*) के बीज के साथ पॉलीबैग में प्रत्यारोपित किया जाता है। प्रत्यारोपण के समय विशेष ध्यान जड़ों को सूखने से बचने के लिए देना चाहिए। प्रत्यारोपण के तुरंत बाद एक सप्ताह तक छाया प्रदान की जा सकती है। दिन में एक बार पानी देना चाहिए, लेकिन अधिक नमी से बचना चाहिए। पोषिता पौधों की बार-बार छँटाई की जानी चाहिए, ताकि वे चंदन के विकास में बाधा न डालें। पॉलीबैग में 2:1:1 अनुपात (रेत: लाल मिट्टी: फार्मयार्ड खाद) का मिट्टी मिश्रण होना चाहिए। यह पाया गया है कि 30X14 सेमी आकार के पाम्लीबैग सबसे अच्छे हैं। नेमाटोड के हमले से बचने के लिए 2 ग्राम प्रति पॉलीबैग एकलक्स, पॉलीबैग

मिश्रण को बैग में भरने से पहले अच्छी तरह मिलाया जाना चाहिए। जड़ों को मिट्टी में घुसने से बचाने के लिए दो महीने में एक बार स्थानांतरण किया जा सकता है। नियमित अंतराल पर निराई-गुड़ाई करनी होती है। लगभग 30 सेमी ऊंचाई के रोपण योग्य पौधे 6-8 महीने के समय में उगाए जा सकते हैं। भूरे तने वाला अच्छी शाखाओं वाला पौधा खेत में रोपण के लिए आदर्श होता है।

वृक्षारोपण

चन्दन के पॉलीबैग में तैयार पौधों को खेत में लगाने के लिए गड्ढे 4 मीटर X 4 मीटर की दूरी पर खोदे जाते हैं। चंदन के स्वस्थ पौधे जिसकी ऊंचाई 30 सेमी से अधिक हो, उनको गड्ढों में लगाया जाता है। पोषिता वृक्षों के रूप में विविध माध्यमिक वन प्रजातियों को चन्दन के निकटवर्ती गड्ढों में लगाया जाता है। यह विधि कई वन क्षेत्रों में सफल साबित हुई है। खेत में रोपण के समय यह आवश्यक है की दलहन फसलों जैसे अरहर की बुआई उसी समय अथवा कुछ दिनों बाद की जाये जिससे चन्दन के पौधों को पोषण मिले। पोषिता वृक्ष चन्दन को दीर्घ समय तक पोषण प्रदान करते हैं एवं दलहन फसलें चन्दन के पौधों को प्राथमिक 3-4 वर्षों तक पोषण देते हैं । चंदन के से अधिक पोषिता वृक्ष हैं, जिनमें से ज्ञात बबूल, करंज, बकेन, मीठा इन्द्रजौ और कसौद कुछ अच्छे पोषिता वृक्ष हैं।

कीट और रोग

स्पाइक रोग चंदन की महत्वपूर्ण बीमारियों में से एक है। यह रोग माइकोप्लाज्मा जैसे जीवों के कारण होता है। यह पेड़ के विकास के किसी भी चरण में हो सकता है। जैसे-जैसे बीमारी बढ़ती है, नई पत्तियाँ छोटी, संकरी या अधिक नुकीली हो जाती हैं और प्रत्येक क्रमिक वर्ष में उनकी संख्या कम हो जाती है, जब तक कि नई कोपलें बारीक स्पाइक जैसी न दिखने लगें। रोग की अग्रिम अवस्था में टहनियों पर अंतर-नोड दूरी छोटी हो जाती है, पोषिता और चंदन के बीच हॉस्टोरियल संबंध टूट जाता है और पौधा लगभग 2 से 3 वर्षों में मर जाता है। रोग का प्रसार छिटपुट होता है और रोग प्रकृति में कीट वाहकों द्वारा फैलता है। यह पाया गया है कि कीट *नेफोटेटिक्स विरेसेंस* के अलावा अन्य कीट वाहक भी रोग के संचरण के लिए जिम्मेदार हो सकते हैं। स्पाइक रोग के नियंत्रण हेतु अभी तक कोई स्थाई उपचारात्मक उपाय निर्धारित नहीं हो पाएं हैं। तना छेदक (जुजेरा कॉफीज नीटन), लाल छेदक (इंदरबेला क्वार्डिनोटाटा वाकर), छाल खाने वाला कैटरपिलर, और अरिस्टोबिया ऑक्टोफैसिकुलटा ऑरिविलियस (हार्टवुड बोरर) कुछ ऐसे कीट हैं जो जीवित पेड़ों को काफी नुकसान पहुंचाते हैं। नियंत्रण उपायों में जैविक कीटनाशक जैसे नीमास्त्र, अग्निअस्त्र का अथवा कोराजन नमक अजैविक कीटनाशक का प्रयोग किया जाता है। पौधों के अच्छे विकास में जैविक खाद जैसे जीवामृत का प्रयोग किया जा सकता है।

कृषि की चुनौतियाँ

चन्दन की दीर्घकालिक परिपक्वता इसे जोखिमपूर्ण निवेश बनाती है। स्पाइक रोग जैसे संक्रमण इसकी फसलों को हानि पहुँचा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, चन्दन की उच्च आर्थिक कीमत के कारण चोरी एवं तस्करी भी एक गंभीर समस्या है। तथापि, सरकार द्वारा दिये गए प्रोत्साहन एवं कृषिवानिकी के नवीन तरीकों ने सतत खेती को प्रोत्साहित किया है।

सांस्कृतिक महत्वः भारतीय परम्पराओं की आत्मा

भारतवर्ष में चन्दन का सांस्कृतिक महत्व अत्यन्त गूढ़ है। इसकी सुगंध दिव्यता की प्रतीक मानी जाती है एवं इसका उपयोग धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक परंपराओं में होता आया है।

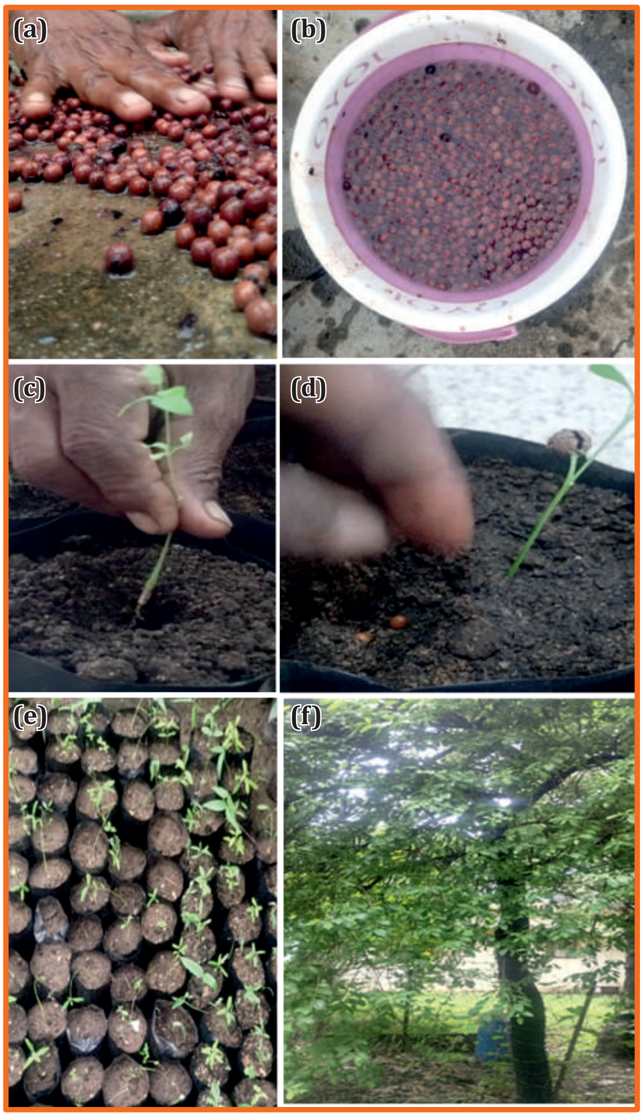

(a) बीजगोलक से गूदा निष्कासन (b) 0.5% गिब्बरेलिक अम्ल द्वारा बीजोपचार (c) पॉलीबैगों में अंकुरों का पुनःरोपण (d) चन्दन अंकुर पॉलीबैगों में अरहर बीजों का रोपण (e) रोपणशाला में चन्दन पौध (f) चन्दनवृक्ष

धार्मिक एवं आध्यात्मिक उपयोग

हिन्दू धर्म में चन्दन को पवित्र अर्पण माना गया है। इसकी लकड़ी को पीसकर प्राप्त चन्दन लेप देवताओं को अर्पित किया जाता है तथा श्रद्धालुओं के ललाट पर लगाया जाता है। इसकी शीतल एवं पवित्र सुगंध मानसिक शुद्धि में सहायक मानी जाती है। दक्षिण भारत के मन्दिरों में इसका उपयोग विशेष रूप से होता है।

बौद्ध धर्म में यह ध्यान एवं शान्ति का प्रतीक है, तथा जैन परंपरा में इसका उपयोग पवित्र मूर्तियों के अभिषेक हेतु होता है।

सामाजिक एवं सौंदर्य परक उपयोग

विवाहों एवं उत्सवों में चन्दन का लेप सौंदर्यवर्धक तथा शीतलता प्रदान करने वाला माना जाता है। कर्नाटक की विशिष्ट चन्दन की काष्ठकला (wood carving) विश्वविख्यात है और यह भारत की शिल्प परंपरा का उत्कृष्ट उदाहरण है।

औषधीय महत्व: प्रकृति की उपचार शक्ति

प्राचीन आयुर्वेद, यूनानी, एवं चीन की पारंपरिक चिकित्सा में चन्दन का उल्लेख औषधीय गुणों के लिए किया गया है। इसकी लकड़ी एवं तेल शीतलन, रक्तशुद्धि, एवं तनाव-निवारण में सहायक माने गए हैं।

आयुर्वेदिक उपयोग

चन्दन को आयुर्वेद में शीतल व शांतिदायक माना गया है। त्वचा रोगों, जैसे मुँहासे, जलन, एवं चर्मरोगों में इसका लेप उपयोगी है। इसका तेल अरोमाथेरेपी में तनाव, अनिद्रा एवं मानसिक बेचैनी को कम करने हेतु प्रयुक्त होता है।

आधुनिक चिकित्सा में प्रयोग

चन्दन तेल में सैण्टालोल (santalol) नामक यौगिक पाया जाता है, जो प्रतिजैविक, प्रतिशोथक एवं कैंसरनाशी गुणों से युक्त है। यह आधुनिक सौंदर्य प्रसाधनों एवं औषधीय उत्पादों में प्रयुक्त होता है।

सुगंधित सम्पदा का आर्थिक एवं वाणिज्यिक पक्ष

चन्दन विश्व की सबसे महंगी लकड़ियों में से एक है। भारत में यह इत्र, सौंदर्य प्रसाधन, औषधि एवं हस्तशिल्प उद्योग का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। भारत के अगरबत्ती, साबुन, इत्र एवं तेल उद्योगों में चन्दन की भारी माँग है। कर्नाटक राज्य, विशेषत: मैसूरु, चन्दन तेल निर्माण में अग्रणी है। भारतीय चन्दन की सुगंध, तेल की गुणवत्ता एवं शुद्धता के कारण विश्वभर में इसकी माँग है। मध्य-पूर्व, यूरोप एवं जापान इसके प्रमुख आयातक हैं। प्रसिद्ध ब्राण्ड जैसे Chanel एवं Dior अपने इत्रों में चन्दन तेल का उपयोग करते हैं।

वाणिज्यिक चुनौतियाँ

सरकारी नियंत्रण एवं कठोर नियमों के कारण छोटे किसानों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। साथ ही, कृत्रिम चन्दन तेल के प्रचलन से प्राकृतिक उत्पादों को प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है।

दोहन: चन्दन के मूल्य का नकारात्मक प्रभाव

चन्दन की ऊँची आर्थिक कीमत के कारण इसके अवैध कटान, तस्करी एवं जंगलों की क्षति जैसी समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

अवैध कटाई एवं तस्करी

कुख्यात तस्कर वीरप्पन जैसे अपराधियों द्वारा चन्दन की अवैध तस्करी की घटनाएँ भारत के लिए बड़ी चुनौती रही हैं। आज भी कर्नाटक एवं तमिलनाडु की सीमांत वनों में ऐसी घटनाएँ सामने आती रहती हैं।

पर्यावरणीय प्रभाव

अत्यधिक दोहन के कारण वन्य चन्दन वृक्षों की संख्या में गिरावट आई है। इससे जैवविविधता एवं पारिस्थितिकी पर भी दुष्प्रभाव पड़ा है। IUCN ने इसे संवेदनशील प्रजाति घोषित किया है।

संरक्षण प्रयास: एक राष्ट्रीय धरोहर की रक्षा

सरकार एवं विभिन्न संस्थाएँ चन्दन की रक्षा एवं सतत खेती हेतु प्रयासरत हैं।

विधिक एवं नीतिगत उपाय

सरकार ने चन्दन की खेती हेतु नियमों को सरल बनाया है, जिससे निजी कृषक भी इसे उगाकर आर्थिक लाभ कमा सकें। साथ ही, इसके व्यापार पर निगरानी रखी जा रही है।

पुनर्वनीकरण एवं अनुसंधान

ICFRE-IWST बेंगलुरु जैसे संस्थान सतत कृषि, रोग-प्रतिरोधक प्रजातियों एवं ऊतक-संवर्धन (tissue culture) पर अनुसंधान कर रहे हैं।

जनसहभागिता

कर्नाटक एवं अन्य राज्यों में जनजातीय समुदायों को चन्दन संरक्षण में सम्मिलित किया जा रहा है। कृषक सहकारी समितियाँ किसानों को संगठित कर उचितव्यापार सुनिश्चित कर रही हैं।

भविष्य की दिशाः चन्दन का संरक्षण और संवर्धन

चन्दन के उज्ज्वल भविष्य के लिए आवश्यक है कि आर्थिक हित एवं प्राकृतिक संरक्षण के बीच संतुलन बनाया जाए। वैज्ञानिक नवाचार, जागरूकता अभियान, किसान प्रोत्साहन योजनाएँ एवं सख्त कानूनी कार्यवाही से इसे संरक्षित किया जा सकता है।

उपसंहार

चन्दन केवल एक वृक्ष नहीं, अपितु भारत की सांस्कृतिक आत्मा, आर्थिक समृद्धि एवं प्राकृतिक औषधि का प्रतीक है। इसके संरक्षण में यदि जन, शासन एवं विज्ञान मिलजुल कर कार्य करें, तो यह सुगंधित धरोहर युगों तक भारत की पहचान बनी रहेगी।

राजस्थान के शुष्क वनों में पुनर्स्थापना की रणनीतियाँ

मनोरथ सेन (वैज्ञानिक-बी), दीपक कुमार, (वैज्ञानिक-बी), सौरभ बाग, (वैज्ञानिक-बी), वन संवर्धन एवं वन प्रबंधन प्रभाग,

अतहर परवेज, (वैज्ञानिक-बी), विस्तार प्रभाग,

शरद कोठारी, (वैज्ञानिक-बी), वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग

परिचय

राजस्थान भारत का सबसे बड़ा राज्य होने के साथ-साथ देश के प्रमुख शुष्क एवं अर्ध-शुष्क पारितंत्रों का प्रतिनिधित्व करता है। थार मरुस्थल, पश्चिमी राजस्थान के शुष्क वन तथा अरावली की अर्ध-शुष्क पहाड़ियाँ न केवल विशिष्ट जैव विविधता का घर हैं बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता, जल सुरक्षा और ग्रामीण आजीविका के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन वनों की विशेषता यह है कि ये अत्यंत सीमित संसाधनों विशेषकर जल के बावजूद जीवन को बनाए रखते हैं। पिछले कुछ दशकों में जलवायु परिवर्तन, अनियमित एवं घटती वर्षा, तापमान में वृद्धि, अत्यधिक चराई, खनन गतिविधियाँ, अवैज्ञानिक भूमि उपयोग और बढ़ते मानवीय दबावों के कारण राजस्थान के शुष्क वनों का तीव्र क्षरण हुआ है। इसके परिणामस्वरूप वन आवरण में कमी, मिट्टी का कटाव, जैव विविधता का ह्रास और ग्रामीण समुदायों की आजीविका पर नकारात्मक प्रभाव देखने को मिला है। ऐसे परिदृश्य में वन पुनर्स्थापना एक समग्र समाधान के रूप में उभरा है। इसका उद्देश्य केवल पेड़ लगाना नहीं, बल्कि क्षरित पारितंत्र को उसकी प्राकृतिक संरचना, कार्यप्रणाली और उत्पादकता के साथ पुनः स्थापित करना है। शुष्क क्षेत्रों में पुनर्स्थापना एक दीर्घकालिक क्रिया है, जिसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण, स्थानीय ज्ञान और समुदाय की सहभागिता का संतुलित समन्वय आवश्यक है।

राजस्थान के शुष्क वनों की विशेषताएँ

राजस्थान के शुष्क वनों की पारिस्थितिकी अन्य वनों से भिन्न है। यहाँ वार्षिक वर्षा सामान्यतः 150 से 400 मिमी के बीच होती है और वर्षा का वितरण अत्यंत असमान रहता है। कई बार अल्प अवधि में तीव्र वर्षा होती है जिससे जल का अधिकांश भाग बहकर नष्ट हो जाता है और मिट्टी में नमी लंबे समय तक नहीं टिक पाती। मिट्टी प्रायः रेतीली या कंकरीली होती है जिसमें जैविक पदार्थ और पोषक तत्वों की मात्रा कम पाई जाती है। वनस्पतियाँ धीमी वृद्धि वाली और सूखा-सहिष्णु होती हैं। खेजड़ी, रोहिड़ा, केर और बबूल जैसी प्रजातियाँ इन कठिन परिस्थितियों में भी जीवित रहने की क्षमता रखती हैं। इन वनों पर स्थानीय समुदायों की आजीविका का सीधा दबाव रहता है। ईंधन, चारा और गैर-काष्ठ वन उपज के लिए निर्भरता अधिक होने के कारण संरक्षण और उपयोग के बीच संतुलन बनाना एक बड़ी चुनौती है। यही कारण है कि यहाँ पुनर्स्थापना के लिए पारिस्थितिकी-आधारित और स्थल-विशिष्ट रणनीतियों की आवश्यकता होती है।

वन पुनर्स्थापना की आवश्यकता और उद्देश्य

शुष्क वनों का क्षरण केवल पर्यावरणीय समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक संकट को भी जन्म देता है। जब वन नष्ट होते हैं, तो मिट्टी का कटाव बढ़ता है, जल स्रोत सूखने लगते हैं और मरुस्थलीकरण की प्रक्रिया तेज हो जाती है। इसका सीधा

प्रभाव ग्रामीण समुदायों की आजीविका, खाद्य सुरक्षा और जल उपलब्धता पर पड़ता है। वन पुनर्स्थापना का मुख्य उद्देश्य पारिस्थितिक संतुलन की पुन:बहाली है। इसके अंतर्गत देशज वनस्पतियों और जीव-जंतुओं के आवास को पुन: स्थापित करना, मिट्टी एवं जल संसाधनों का संरक्षण करना तथा वनों की उत्पादकता बढ़ाना शामिल है। इसके साथ-साथ पुन:स्थापना का एक महत्वपूर्ण सामाजिक उद्देश्य भी है-स्थानीय समुदायों के लिए स्थायी आजीविका के अवसर सृजित करना और उन्हें संरक्षण की प्रक्रिया में सहभागी बनाना।

शुष्क वनों में पुनर्स्थापना की नवीन रणनीतियाँ

जल संरक्षण आधारित पुनर्स्थापना रणनीतियाँ : शुष्क क्षेत्रों में पुनर्स्थापना की सफलता का सबसे महत्वपूर्ण आधार जल उपलब्धता है। बिना जल संरक्षण के वृक्षारोपण और पुनर्स्थापना के अधिकांश प्रयास असफल हो जाते हैं। इसी कारण अब पुनर्स्थापना की योजनाओं में जल संरक्षण को केंद्रीय स्थान दिया जा रहा है। कंटूर ट्रेंच, माइक्रो-कैचमेंट, स्टोन बंड और छोटे चेक डैम जैसी संरचनाएँ वर्षा जल को बहने से रोककर मिट्टी में नमी बनाए रखती हैं। इससे न केवल लगाए गए पौधों की जीवित रहने की दर बढ़ती है बल्कि आसपास की प्राकृतिक वनस्पति के पुनर्जनन को भी बढ़ावा मिलता है। जल संरक्षण आधारित दृष्टिकोण शुष्क वनों में पुनर्स्थापना की आधारशिला बन चुका है।

देशज एवं सूखा-सहिष्णु प्रजातियों का चयन : प्रजाति चयन पुनर्स्थापना की दीर्घकालिक सफलता का एक निर्णायक कारक है। अतीत में कई स्थानों पर विदेशी या तीव्र वृद्धि वाली प्रजातियों के रोपण से अल्पकालिक हरियाली तो दिखाई दी लेकिन दीर्घकाल में ऐसे प्रयोग टिकाऊ सिद्ध नहीं हुए। अब यह स्पष्ट हो चुका है कि देशज और स्थानीय रूप से अनुकूलित प्रजातियाँ ही शुष्क वनों के लिए उपयुक्त हैं। ये कम जल में भी जीवित रहती हैं, मिट्टी के साथ बेहतर सामंजस्य बनाती हैं और स्थानीय जीव-जंतुओं को सहारा देती हैं। मिश्रित प्रजातियों का रोपण वन संरचना को अधिक स्थिर, लचीला और जलवायु परिवर्तन के प्रति सहनशील बनाता है।

प्राकृतिक पुनर्जनन : हर स्थान पर नए पौधे लगाना आवश्यक नहीं होता। कई क्षरित क्षेत्रों में बीज बैंक और जड़ें पहले से मौजूद रहती हैं, जिन्हें केवल अनुकूल परिस्थितियों की आवश्यकता होती है। ऐसे क्षेत्रों में सहायता प्राप्त प्राकृतिक पुनर्जनन एक प्रभावी और कम लागत वाली रणनीति है। इस पद्धति में चराई नियंत्रण, वनाग्नि से सुरक्षा और अवांछित झाड़ियों का सीमित निष्कासन किया जाता है। इससे प्रकृति को स्वयं पुनर्जीवित होने का अवसर मिलता है। यह न केवल आर्थिक रूप से किफायती है बल्कि पारिस्थितिकी की दृष्टि से भी अधिक उपयुक्त मानी जाती है।

मृदा स्वास्थ्य और जैविक उपाय : मिट्टी का स्वास्थ्य शुष्क वनों में पुनर्स्थापना की एक महत्वपूर्ण लेकिन अक्सर उपेक्षित कड़ी है। जैविक पदार्थों की कमी के कारण पौधों की जड़ प्रणाली कमजोर रहती है और वे जल-तनाव को सहन नहीं कर पाते। अब पुनर्स्थापना कार्यक्रमों में जैविक खाद, हरित खाद, लाभकारी सूक्ष्मजीवों और माइकोराइजा जैसे जैविक उपायों को शामिल किया जा रहा है। इससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है, जल धारण क्षमता में सुधार होता है और पौधों की वृद्धि अधिक संतुलित होती है।

समुदाय आधारित पुनर्स्थापना मॉडल : राजस्थान के अनुभव स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि स्थानीय समुदायों की भागीदारी के बिना कोई भी पुनर्स्थापना प्रयास दीर्घकालिक नहीं हो सकता। जब समुदायों को योजना निर्माण, क्रियान्वयन और निगरानी में शामिल किया जाता हैतो वनों के प्रति स्वामित्व और जिम्मेदारी की भावना विकसित होती है।ग्राम वन समितियाँ, महिला स्वयं सहायता समूह और चरवाहा समुदाय पुनर्स्थापना की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इससे संरक्षण एक साझा दायित्व बनता है और संघर्ष की संभावना कम होती है।

आजीविका से जुड़ा पुनर्स्थापना (NTFP आधारित मॉडल) : पुनर्स्थापना को आजीविका से जोड़ना इसकी सफलता की संभावना को कई गुना बढ़ा देता है। अकाष्ठ वन उपज आधारित प्रजातियों-जैसे औषधीय पौधे, फल, बीज और गोंद देने वाले वृक्ष का रोपण ग्रामीण आय के नए अवसर सृजित करता है। जब समुदायों को वनों से प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ मिलता है तो वे संरक्षण के प्रति अधिक जागरूक और प्रतिबद्ध बनते हैं। इस प्रकार NTFP आधारित मॉडल संरक्षण और विकास के बीच संतुलन स्थापित करता है।

आधुनिक तकनीक और डिजिटल निगरानी : आधुनिक तकनीकों ने शुष्क वनों में पुनर्स्थापना को अधिक प्रभावी और पारदर्शी बनाया है। रिमोट सेंसिंग और GIS के माध्यम से वन आवरण, भूमि उपयोग परिवर्तन और पौध जीवितता का आकलन किया जा सकता है। मोबाइल आधारित फील्ड डेटा संग्रह और डिजिटल निगरानी प्रणालियाँ निर्णय-निर्माण को अधिक वैज्ञानिक और सटीक बनाती हैं। इससे संसाधनों का बेहतर उपयोग और पुन:स्थापना प्रयासों की निरंतर समीक्षा संभव हो पाती है।

चुनौतियाँ और भविष्य की दिशा

राजस्थान के शुष्क वनों में पुनर्स्थापना की प्रक्रिया अनेक स्तरों पर चुनौतियों से घिरी हुई है। सबसे बड़ी चुनौती जलवायु अनिश्चितता है। वर्षा की मात्रा और वितरण में निरंतर हो रहे बदलावों के कारण पारंपरिक योजना मॉडल अप्रभावी होते जा रहे हैं। कभी अत्यधिक वर्षा तो कभी लंबे सूखे की स्थिति पुनर्स्थापना प्रयासों की सफलता को प्रभावित करती है। तापमान में निरंतर वृद्धि से पौधों पर जल-तनाव बढ़ रहा है, जिससे उनकी जीवित रहने की दर कम हो जाती है। दूसरी प्रमुख चुनौती मानवीय और पशु दबाव है। राजस्थान के शुष्क वनों पर ईंधन, चारा और चराई का दबाव अत्यधिक है। पुनर्स्थापना के प्रारंभिक चरण में लगाए गए पौधे यदि पर्याप्त संरक्षण न पाएँ तो वे आसानी से नष्ट हो जाते हैं। चराई नियंत्रण और सामुदायिक सहमति के बिना किए गए प्रयास प्रायः अल्पकालिक सिद्ध होते हैं। वित्तीय और संस्थागत सीमाएँ भी एक बड़ी बाधा हैं। पुनर्स्थापना एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है, जबकि अधिकांश परियोजनाएँ सीमित अवधि और बजट में संचालित की जाती हैं। परियोजना अवधि समाप्त होते ही निगरानी और संरक्षण में कमी आ जाती है जिससे अर्जित लाभ स्थायी नहीं रह पाते। इसके अतिरिक्त, विभिन्न विभागों और एजेंसियों के बीच समन्वय की कमी भी पुनःस्थापना की गति को प्रभावित करती है। तकनीकी और मानवीय क्षमता की कमी भी एक महत्वपूर्ण चुनौती है। फील्ड स्तर पर कार्यरत कर्मियों और समुदायों में नवीन पुनर्स्थापना तकनीकों, जल संरक्षण उपायों और जैविक प्रबंधन पद्धतियों की जानकारी का अभाव कई बार योजना के प्रभावी क्रियान्वयन में बाधा बनता है। इन चुनौतियों के बीच भविष्य की दिशा स्पष्ट और बहुआयामी होनी चाहिए। सबसे पहले, पुनर्स्थापना योजनाओं को जलवायु-संवेदनशील और स्थल-विशिष्ट बनाना होगा, ताकि बदलते पर्यावरणीय परिदृश्य के अनुरूप रणनीतियों में समय-समय पर सुधार किया जा सके। दीर्घकालिक वित्तीय समर्थन और बहु-वर्षीय परियोजनाओं को प्राथमिकता देना आवश्यक है, जिससे पुनर्स्थापना के परिणाम स्थायी बन सकें। इसके साथ ही नीति स्तर पर मजबूत समर्थन, विभागीय समन्वय और अनुसंधान संस्थानों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक होगी। आधुनिक तकनीकों-जैसे रिमोट सेंसिंग, GIS और डिजिटल मॉनिटरिंग को फील्ड स्तर की वास्तविकताओं और पारंपरिक ज्ञान के साथ जोड़कर एक समन्वित मॉडल विकसित किया जा सकता है। स्थानीय समुदायों के लिए निरंतर क्षमता निर्माण और जागरूकता कार्यक्रम भविष्य में पुनर्स्थापना को अधिक प्रभावी और आत्मनिर्भर बनाएँगे।

निष्कर्ष

राजस्थान के शुष्क वनों में पुनर्स्थापना केवल वृक्षारोपण या भूमि सुधार का कार्य नहीं है बल्कि यह पारिस्थितिकी, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन स्थापित करने की एक व्यापक प्रक्रिया है। शुष्क क्षेत्रों की कठिन परिस्थितियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि यहाँ त्वरित या एकरूप समाधान कारगर नहीं हो सकते। इसके स्थान पर दीर्घकालिक सोच, वैज्ञानिक समझ और स्थानीय सहभागिता पर आधारित रणनीतियाँ ही स्थायी परिणाम दे सकती हैं। जल संरक्षण को केंद्र में रखकर बनाई गई पुनर्स्थापना योजनाएँ, देशज एवं सूखा-सहिष्णु प्रजातियों का चयन, सहायता प्राप्त प्राकृतिक पुनर्जनन, मृदा स्वास्थ्य सुधार तथा समुदाय आधारित प्रबंधन-ये सभी मिलकर शुष्क वनों के पुनर्जीवन की मजबूत आधारशिला तैयार करते हैं। जब इन प्रयासों को आजीविका आधारित दृष्टिकोण और आधुनिक तकनीकों का समर्थन मिलता है तो पुनर्स्थापना केवल पर्यावरण संरक्षण तक सीमित नहीं रहता, बल्कि ग्रामीण विकास और सामाजिक सशक्तिकरण का माध्यम भी बन जाता है। भविष्य में यदि नीति-निर्माता, वैज्ञानिक संस्थान, वन विभाग और स्थानीय समुदाय मिलकर साझा दृष्टिकोण के साथ कार्य करें, तो राजस्थान के शुष्क वन पुनःजीवन से भर सकते हैं। यह न केवल मरुस्थलीकरण की चुनौती का सामना करने में सहायक होगा, बल्कि जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने और भावी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों को सुरक्षित रखने में भी महत्वपूर्ण योगदान देगा। इस प्रकार शुष्क वनों का पुनर्स्थापना एक हरित, संतुलित और सतत भविष्य की दिशा में निर्णायक कदम सिद्ध हो सकता है।

Mitragyna Parviflora: भारत का एक उपेक्षित औषधीय वृक्ष

अशोक कुमार, तकनीकी सहायक (वन संवर्धन एवं वन प्रबंधन प्रभाग), ओम प्रकाश, तकनीकी सहायक (विस्तार प्रभाग) एवं मुकेश कुमार यादव, तकनीकी सहायक (वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग)

परिचय

वनों में पाए जाने वाले वृक्ष प्रजातियाँ पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने और ग्रामीण समुदायों के जीवनयापन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इन्हीं में *Mitragyna Parviflora*, जिसे सामान्यत: कैम (Kaim)/dye/कलाम और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में अलग-अलग नाम से जाना जाता है। यह एक महत्वपूर्ण लेकिन अपेक्षाकृत कम चर्चित प्रजाति है। यह मुख्यत: उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में पाई जाती है तथा भारत के साथ-साथ नेपाल, श्रीलंका और बांग्लादेश जैसे पड़ोसी देशों में भी स्वाभाविक रूप से विकसित होती है। Mitragyna वंश अपने जैव सक्रिय यौगिकों के लिए जाना जाता है और इस वंश की कई प्रजातियों पर औषधीय गुणों के लिए अध्ययन किए जा चुके हैं। इसके बावजूद *M.Parviflora* पर, इसके पारंपरिक उपयोगों के बावजूद, अभी तक पर्याप्त वैज्ञानिक अनुसंधान नहीं किया गया है।

वर्गीकरण

श्रेणी	वर्गीकरण
जगत	Plantae
क्लेड	Angiosperms
गण	Gentianales
कुल	Rubiaceae
वंश	Mitragyna
प्रजाति	*Mitragyna parviflora* (Roxb.) Korth.

वनस्पतिक वर्णन

कैम एक मध्यम से बड़े आकार का पर्णपाती वृक्ष है, जिसकी ऊँचाई सामान्यत: 15–25 मीटर तक होती है और इसका शिखर फैला हुआ होता है। इसकी छाल धूसर से हल्के भूरे रंग की, खुरदरी तथा लंबवत दरारों वाली होती है। पत्तियाँ आमने-सामने लगती हैं, आकार में चौड़ी अंडाकार से दीर्घवृत्ताकार होती हैं एवं चिकनी एवं चमकदार होती हैं तथा इनकी लंबाई लगभग 10–20 सेमी होती है। फूल सामान्यत: जून से अगस्त के बीच खिलते हैं। ये छोटे, पीले-सफेद रंग के होते हैं तथा गोलाकार गुच्छों में व्यवस्थित रहते हैं। इस वृक्ष के फल कैप्सूल प्रकार के होते हैं, जिनमें बहुत छोटे-छोटे बीज होते हैं, जो वायु द्वारा प्रसारण के लिए अनुकूलित होते हैं।

वितरण एवं आवास

कैम (*M. Parviflora*) का वितरण व्यापक रूप से भारत (राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, ओडिशा आदि), नेपाल, श्रीलंका तथा म्यांमार में पाया जाता है। यह प्रजाति मुख्यत: शुष्क एवं आर्द्र पर्णपाती वनों में पाई जाती है। यह अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी को पसंद करती है, जो इसकी जड़ों के समुचित विकास और वृद्धि के लिए अनुकूल होती है। यह वृक्ष समुद्र तल से लगभग 1200 मीटर तक की ऊँचाई पर पाया जाता है, जो इसकी विभिन्न उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय पर्यावरणीय परिस्थितियों में अनुकूलन क्षमता को दर्शाता है।

फाइटोकेमिस्ट्री

फाइटोकेमिकल अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि कैम में कई जैव सक्रिय यौगिक उपस्थित होते हैं, जैसे-एल्कलॉइड्स (विशेष रूप से इंडोल एल्कलॉइड्स), फ्लेवोनॉ इड्स, टैनिन, सैपोनिन तथा ग्लाइकोसाइड्स। ये यौगिक इसके औषधीय गुणों तथा औषधीय संभावनाओं के लिए उत्तरदायी होते हैं।

औषधीय गुण

कैम में विभिन्न औषधीय गुण पाए जाते हैं। इसकी छाल एवं पत्तियों के अर्क में सूजन-रोधी प्रभाव देखे गए हैं। यह विभिन्न जीवाणु एवं कवक प्रजातियों के विरुद्ध प्रभावी होने के कारण प्रतिजैविक गुण भी प्रदर्शित करता है। पारंपरिक चिकित्सा में इसका उपयोग

दस्त एवं पेचिश के उपचार में किया जाता रहा है। इसके अतिरिक्त, यह दर्द निवारक एवं ज्वरनाशक के रूप में भी लोक चिकित्सा में प्रयुक्त होता है।

पारिस्थितिक महत्व

कैम पारिस्थितिकी तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह जैव विविधता को बढ़ावा देता है तथा विभिन्न जीव-जंतुओं और परागणकर्ताओं के लिए आवास एवं खाद्य स्रोत प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त, इसकी सुदृढ़ जड़ प्रणाली मिट्टी को स्थिर रखने और कटाव को रोकने में सहायक होती है, जिससे पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता बनी रहती है। इसकी अनुकूलन क्षमता इसे अवनत भूमि के पुनर्स्थापन के लिए उपयुक्त बनाती है।

आर्थिक उपयोग

यह एक बहुउद्देशीय प्रजाति है, जिसकी लकड़ी मध्यम कठोरता की होती है और इसका उपयोग फर्नीचर तथा निर्माण कार्यों में किया जाता है। इसके अतिरिक्त, यह उच्च गुणवत्ता वाली ईंधन लकड़ी के रूप में भी उपयोगी है। यह कागज एवं लुगदी उद्योग के लिए भी उपयुक्त है तथा कृषि वानिकी प्रणालियों, विशेषकर मिश्रित रोपण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संरक्षण स्थिति एवं चुनौतियाँ

हालांकि वर्तमान में कैम को संकटग्रस्त श्रेणी में नहीं रखा गया है, फिर भी यह आवास विनाश, जागरूकता की कमी तथा सीमित व्यावसायिक महत्व जैसी चुनौतियों का सामना कर रहा है।

भविष्य की संभावनाएँ

कैम में औषधि खोज एवं औषधीय अनुसंधान, जलवायु-सहिष्णु वानिकी तथा सतत ग्रामीण विकास के क्षेत्र में अत्यधिक संभावनाएँ विद्यमान हैं। इसके फाइटोकेमिस्ट्री एवं आनुवंशिक विविधता पर आगे और विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता है, जिससे इसके पूर्ण उपयोग की दिशा में नई संभावनाएँ विकसित की जा सकें।

निष्कर्ष

कैम एक बहुउद्देशीय वृक्ष प्रजाति है, जिसका पारिस्थितिक, औषधीय तथा आर्थिक महत्व अत्यंत महत्वपूर्ण है। अपनी व्यापक संभावनाओं के बावजूद यह अभी भी अपेक्षाकृत कम अध्ययनित है। इसकी खेती को बढ़ावा देकर तथा वैज्ञानिक अनुसंधान को प्रोत्साहित करके सतत वानिकी और स्वास्थ्य क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति प्राप्त की जा सकती है।

कैम वृक्ष, कैम की छाल, फल व पत्तियाँ

गिर राष्ट्रीय उद्यान की पारिस्थितिकी एवं वनस्पतिकीय विविधता

सचिन शर्मा (वैज्ञानिक-बी) वन पारिस्थितिकी एवं जलवायु परिवर्तन प्रभाग

एवं अदिति टेलर (वैज्ञानिक-सी) अनुवांशिकी एवं वृक्ष सुधार प्रभाग

परिचय:

गिर राष्ट्रीय उद्यान पश्चिमी भारत के शुष्क पर्णपाती पारितंत्रों का एक प्रतीकात्मक एवं जैव-भौगोलिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यह उद्यान गुजरात के जूनागढ़, गिर सोमनाथ और अमरेली जिलों में फैला हुआ एक समृद्ध पारिस्थितिक तंत्र है, जिसका क्षेत्रफल लगभग 1410.30 वर्ग कि.मी. है। इसे 1965 में राष्ट्रीय उद्यान के रूप में स्थापित किया गया था और तब से यह एशियाई शेर के लिए एकमात्र प्राकृतिक आवास के रूप में जाना जाता है। 19वीं सदी के अंत तक गिर वनक्षेत्र में शेरों की संख्या में अत्यधिक गिरावट देखी गई थी, किंतु तत्कालीन जूनागढ़ के नवाब ने इन्हें बचाने के लिए शिकार पर रोक लगाकर गिर शेत्र को अभयारण्य घोषित किया। गिर का महत्व केवल शेर के संरक्षण तक ही सीमित नहीं है, परन्तु इसकी भौगोलिक स्थिति इसे पूर्ण क्षेत्र के पारिस्थितिक संतुलन और जलवायु विनियमन के लिए भी महत्वपूर्ण बनाती है। यह क्षेत्र सात प्रमुख नदी समूहों, जिसमें हिरन, सरस्वती, धातरवती, शिंगोदरा, मछुंदरी, घोड़ावाड़ी और रावल नदियाँ सम्मिलित हैं, के जल–आश्रय के रूप में कार्य करता है। गिर क्षेत्र में उष्णकटिबंधीय मानसून प्रकार की की जलवायु है जिसमें ग्रीष्म, वर्षा तथा शीत मिलाकर मुख्यत तीन ऋतुएँ होती हैं। शीतकाल (दिसंबर से फरवरी) में न्यूनतम तापमान 10°C तक पहुँच सकता है, जबकि ग्रीष्मकाल (अप्रैल–मई) में तापमान 40–43°C तक बढ़जाता है। क्षेत्र में वर्षा का वितरण असमान है। पश्चिमी भाग में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 1000 मिमी रहती है, जबकि पूर्वी भाग में औसतन 600 मिमी वर्षा होती है। स्थलाकृति की दृष्टि से गिर एक पहाड़ी और पठारी मिश्रित क्षेत्र है जो मुख्यत: मैग्मेटिक मूल के डेकेन ट्रैप बेसाल्ट तथा डोलोमाइट चट्टानों से बने हैं। इन पहाड़ियों पर काली कपास मिट्टी पाई जाती है, जबकि नदियों के किनारों पर कंकरीली और बलुई दोमट भूमि है।

वन प्रकार एवं वानस्पतिक विविधता

वानस्पतिक विविधता के दृष्टिकोण से गिर एक अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र है। गिर राष्ट्रीय उद्यान में विविध वनावृतियाँ पाई जाती हैं। चौंपियन एवं सेठ द्वारा वन प्रकार वर्गीकरण के अनुसार गिर में 5A/C1a श्रेणी का अत्यधिक शुष्क सागौन वन है। इसके अतिरिक्त, यहाँ शुष्क पर्णपाती झाड़ीवन, शुष्क उपवन (विडी घासभूमि) और नदीतटीय वन भी पाए जाते हैं, जो मिलकर एक जटिल और बहुस्तरीय वन संरचना का निर्माण करते हैं। गिर के वनों में पाई जाने वाली प्रमुख पादप प्रजातियों को आगे के भागों में उनके जीवन–रूप के आधार पर वर्णित किया गया है।

वृक्ष प्रजातियाँ: गिर के शुष्क पर्णपाती वनों में सागौन और बबूल जैसी प्रजातियों की प्रधानता है। यहाँ पाई जाने वाली प्रमुख वृक्ष प्रजातियाँ इस प्रकार हैं: सागौन *(टेक्टोना ग्रैंडिस)*, धवड़ो *(एनोगिसस लैटिफोलिया)*, सदड़ा *(टर्मिनेलिया अलाटा)*, अर्जुन *(टर्मिनेलिया अर्जुना)*, सालई *(बोसवेलिया सेराटा)*, ढाक *(ब्यूटिया मोनोस्पर्मा)*, मावेदी *(लैनिया कोरोमंडेलिका)*, जामुन *(सिजिजियम क्यूमिनी)*, तेंदू *(डायोस्पायरोस मेलानोजायलॉन)*, महुआ *(मधुका इंडिका)*, करंज *(पोंगेमिया पिन्नाटा)*, नीम *(अजाडिरैक्टा इंडिका)*, सिरिस *(एल्बिजिया लेब्बेक)*, अंजन *(हार्डविकिया बायनाटा)*, रोहिड़ा *(टेकोमेला अंडुलेटा)*, चारल *(स्टरकुलिया यूरेंस)*, बेल *(एगल मार्मेलोस)*, चिलबिल *(होलोप्टेलिया इंटीग्रिफोलिया)*, काकड़ *(गरूगा पिन्नाटा)*, लसोड़ा *(कोर्डिया डाइकोटोमा)*, बरगद *(फाइकस बेंघालेन्सिस)*, पीपल *(फाइकस रेलिजियोसा)*, गूलर *(फाइकस रैसीमोसा)*, बेर *(जिजिफस मॉरिशियाना)*, अमलतास *(कैसिया फिस्टुला)*, कदंब *(मित्रागाइना पार्विफोलिया)*, हिंगोट *(बैलानाइटिस एजिप्टियाका)*, खेजड़ी *(प्रोसोपिस सिनेरेरिया)*, अरडू *(ऐलैंथस एक्सेल्सा)*, कुसुम *(श्लाइकेरा ओलियोसा)*, गम्हार *(मेलिना आर्बोरिया)*, झेर *(स्ट्रिक्नोस नक्स–वोमिका)*, हरड़ *(टर्मिनेलिया चेबुला)*, बहेड़ा *(टर्मिनेलिया बेलिरिका)*, करम *(होलार्हेना एंटीडिसेंटेरिका)*, महुल *(केरिया आर्बोरिया)* और खिरनी *(मनिलकारा हेक्सेंड्रा)*।

गिर में सागौन बहुल्य क्षेत्र

झाड़ियाँ एवं लताएँ: गिर के वन-तल और पहाड़ी ढलानों पर झाड़ियों एवं लताओं की विविधता देखी गई है। प्रमुख वृक्ष

चारल (स्टरकुलिया यूरेंस)

प्रजातियाँ इस प्रकार हैं: गुग्गुल *(कोमिफोरा वाइटि)*, करोंदा *(कैरिसा कैरंडस)*, आक *(कैलोट्रोपिस प्रोसेरा)*, केर *(कैप्पारिस डेसिडुआ)*, गंगेर *(ग्रेविया टेनैक्स)*, कांट *(मेटेनस एमरजिनाटा)*, रतनजोत *(जैट्रोफा करकस)*, नील झाड़ी *(इंडिगोफेरा ओब्लोंगिफोलिया)*, लैंटाना *(लैंटाना कैमारा)*, मालू *(बौहिनिया वाह्ली)*, गुडूची *(टिनोस्पोरा कॉर्डीफोलिया)*, रत्ती *(एब्रस प्रिकैटोरियस)*, हड़जोड़ *(सिसस क्वाड्रैंगुलैरिस)*, अनंतमूल *(हेमिडेस्मस इंडिकस)*, कृष्णसार *(क्रिप्टोलेपिस ब्युकनेनीआये)*, उतरण *(पर्गुलारिया डेमिया)*, बन आलू *(डायोस्कोरिया बल्बीफेरा)*, शतावरी *(एस्पैरागस रैसीमोसस)*, वेत *(कोकुलस हिरसुटस)*, जंगली कृष्णफल *(पैसिफ्लोरा फोएटिडा)*, कठबेर *(जिजिफस जाइलोपायरस)*, गुलबासा *(क्लेरोडेंड्रम फ्लोमिडिस)*, नीलगिरी झाड़ *(वाइटेक्स नेगुंडो)*, वज्रदंती *(बारलेरिया प्रायोनाइटिस)*, मरोड़ फली *(हेलिक्टेरस इसोरा)*, कांटेली *(जिजिफस नुम्मुलारिया)*, सफेद करोंदा *(फ्लूएजिया ल्यूकोपाइरस)* और अरंडी *(रिसिनस कम्युनिस)*।

धवड़ो (एनोगिसस लेटिफोलिया)

घास एवं शाकीय वनस्पति: शाकाहारी वन्यजीवों के भोजन का मुख्य स्रोत यहाँ की घासभूमियाँ हैं। प्रमुख घास और शाक प्रजातियाँ इस प्रकार हैं: धमन घास *(सेंक्रस सिलियारिस)*, दूब *(साइनोडॉन डैक्टिलॉन)*, बेंगू *(डाइकेन्थियम एन्यूलैटम)*, कांस *(सैकरम स्पॉन्टेनियम)*, लालघास *(इम्पेरेटा सिलिंड्रिका)*, कुश *(डेस्मोस्टैकिया बिपिन्नाटा)*, जंगल घास *(अप्लूडा म्यूटिका)*, सूखी घास *(बोथ्रियोक्लोआ पर्टुसा)*, पंख घास *(क्लोरिस बारबेटा)*, पुनर्नवा *(बोएरहाविया डिफ्यूसा)*, अश्वगंधा *(विथानिया सोम्नीफेरा)*, चिरचिटा *(एकिरैंथेस एस्पेरा)*, गोखरू *(ट्राइब्यूलस टेरेस्ट्रिस)*, सरपंखा *(टिफ्रोसिया परप्यूरिया)*, चकवड़ *(कैसिया तोरा)*, नील *(इंडिगोफेरा कोरडीफोलिया)*, गूमा *(ल्यूकास एस्पेरा)*, दूधिया *(यूफोर्बिया हिरटा)*, भृंगराज *(एक्लिप्टा प्रोसट्रेटा)*, गाजर घास *(पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस)*, नागफनी *(ओपुनशिया स्ट्रिक्टा)*, बन तुलसी *(हिप्टिस सुआवियोलेंस)*, जंगली पालक *(अमारैंथस विरिडिस)*, कुलफा *(पोर्टुलाका ओलेरेसिया)*, खट्टी बूटी *(ऑक्सैलिस कॉर्निकुलाटा)*, भटकटैया घास *(ट्रायडैक्स प्रोकम्बेंस)*, जंगली सोंठ *(ब्लूमिया लैसेरा)*, जंगली सरसों *(क्लिओम विस्कोसा)* और नागरमोथा *(सायपेरस रोटुंडस)*।

गिर राष्ट्रीय उद्यान का पारिस्थितिकीय विश्लेषण

गिर राष्ट्रीय उद्यान की वानस्पतिकीय संरचना का विस्तृत विश्लेषण यह दर्शाता है कि यह पारितंत्र केवल वृक्षों का समूह नहीं, बल्कि एक जटिल पारिस्थितिक तंत्र है। प्रजातियों के वितरण और उनकी स्थिति का विश्लेषण कई महत्वपूर्ण बिंदुओं पर प्रकाश डालता है। प्रजातियों में फैबेसी और पोएसी फैमिली का स्पष्ट प्रभुत्व दिखता है। फैबेसी फैमिली (जैसे बबूल, पोंगामिया, ब्यूटिया) की प्रजातियाँ शुष्क वनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं क्योंकि ये वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करके मृदा की उर्वरता को बढ़ाती हैं, जो गिर की पथरीली और कम पोषक तत्वों वाली मिट्टी के लिए जीवनदायी है। दूसरी ओर, पोएसी फैमिली (घासें) शाकाहारी वन्यजीवों (चीतल, सांभर, नीलगाय) के लिए प्राथमिक ऊर्जा स्रोत हैं। इन शाकाहारियों की स्वस्थ आबादी ही गिर के शीर्ष शिकारी, एशियाई शेर, के अस्तित्व को सुनिश्चित करती है। गिर के वन एक स्पष्ट त्रि-स्तरीय संरचना प्रदर्शित करते हैं। ऊपरी स्तर में सागौन और महुआ जैसे ऊँचे वृक्ष हैं जो छाया प्रदान करते हैं और मिट्टी की नमी बनाए रखते हैं। मध्य स्तर में जिजिफस, कैरिसा और हेलिक्टेरस जैसी झाड़ियाँ हैं जो वन्यजीवों को छिपने का स्थान और पक्षियों को घोंसले बनाने की जगह प्रदान करती हैं। निचला स्तर विविध घासों और शाकों से बना है। यह बहु-स्तरीय संरचना इस क्षेत्र में अधिकतम जैव-विविधता को आश्रय प्रदान करती है।

यह क्षेत्र संरक्षण की दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रजातियों का भी आवास है। यहाँ औषधीय महत्व की प्रजातियाँ जैसे गुग्गुल *(कोमिफोरा वाइटि)*, जो कि संकटग्रस्त स्थिति में हैं, भी पायी जाती हैं। इसी प्रकार यहाँ सालई *(बोसवेलिया सेराटा)* और खिरनी *(मनिलकारा*

हेक्सेंड्रा) प्रजातियाँ भी पायी जाती हैं जिनमें धीमे पुनर्जनन के कारण इनकी आबादी पर दबाव बढ़ रहा है। इसके विपरीत, यहाँ लैंटाना (*लैंटाना कैमारा*) और गाजर घास (*पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस*) जैसी विदेशी आक्रामक प्रजातियाँ तेजी से फैल रही हैं। ये आक्रामक प्रजातियाँ देशी घास और झाड़ियों को विस्थापित कर रही हैं, जिससे शाकाहारी जीवों के लिए चारे की उपलब्धता कम हो सकती है जो कि अंततः पूरे आहार श्रृंखला को प्रभावित कर सकती हैं।

गिर राष्ट्रीय उद्यान पर किया गया यह अध्ययन सिद्ध करता है कि यह क्षेत्र केवल एशियाई शेर का अभयारण्य मात्र नहीं है बल्कि भारत के शुष्क पर्णपाती वनों की वनस्पति विविधता का एक महत्वपूर्ण आनुवंशिक भंडार भी है। यहाँ की वनस्पति न केवल मृदा संरक्षण और जल चक्र को बनाए रखने में सहायक है बल्कि यह अनगिनत जीवों को आश्रय और भोजन प्रदान करती है। अंततः गिर की पारिस्थितिक अखंडता को बनाए रखने के लिए वन विभाग के वैज्ञानिक प्रबंधन के साथ-साथ स्थानीय समुदायों (जैसे मालधारी) की सक्रिय भागीदारी अनिवार्य है। यह समन्वित प्रयास ही सुनिश्चित करेगा कि गिर भविष्य में भी अपनी जैव विविधता के लिए जाना जाता रहे।

अद्‌भुत खटटी बूटी-चांगेरी

अमीन उल्लाह खान (सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी), डॉ. शिवानी भटनागर (वैज्ञानिक-ई), वन संरक्षण प्रभाग

चांगेरी या तीन पत्तियाँ का नाम आपने शायद ही सुना होगा। यह आयुर्वेदिक गुणों से भरपूर पौधा है। जिसके फूल, पत्तियाँ और बीज स्वास्थ्य के लिये बहुत ही गुणकारी होते हैं। आयुर्वेद में चांगेरी का इस्तेमाल गंभीर परेशानियों को दूर करने के लियेकिया जाता है। यह उत्तराखण्ड के गड़वाल, कुमाँऊ सहित हिमालयी क्षेत्रों में 2000 मीटर की ऊंचाई तक एवं संपूर्ण भारतवर्ष में पाई जाती है। भारत के विभिन्न प्रांतो में चांगेरी अलग-अलग नामो से जानी जाती है। चांगेरी या त्रिपत्रिका (तीन पत्तियाँ) का वानस्पतिक नाम *ऑक्जैलिस कार्नीक्युलेटा* है। चांगेरी ऑक्जैलिडेसी कुल से संबधित है। इसे संस्कृत में चांगेरी, दन्तषठा, अम्बष्ठा, हिंदी में चांगेरी, तीन पत्तियाँ पंजाबी में खट्टी बूटी व अमरूल अंग्रजी में सौर वीड, सौर ग्रास, येलो सौरेल, इण्डियन सौरेल, क्रीपिंग ऑक्सेलिस कहते हैं। इसकी पत्तियों का खट्टा स्वाद होने के कारण आम भाषा में इसे खट्टी बूटी तथा तीन पत्तियों के कारण तिपत्तिया के नाम से भी जाना जाता है। इसके पत्ते अम्लीय (acidic) प्रकृति के होते हैं, इसलिये संस्कृत में इसे अम्लपत्रिका भी कहा जाता है। अंग्रजी भाषा में यह इण्डियन सौरेल (Indian sorrel), वुड सोरेल या ऑक्जेलिस के नाम से प्रसिद्ध है। आमतौर पर इसे एक जंगली घास (खरपतवार) माना जाता है क्योंकि यह कहीं भी उग आती है। अधिकतर यह गीली, छांयादार तथा नम जगहों पर उगती है। नम व छांयादार स्थानो जैसे बगीचों, नर्सरी, लॉन, क्यारियों में खाली पड़ी जगहों तथा घर में लगे गमलो में भी खूब फैलती है। इसमें छोटी-छोटी फलियां लगती हैं जिनमें बारीक बीज होते है। फलियां सूखने पर चटक कर बिखर जाती है। जिनसे नए पौधे पैदा होते रहते हैं। इस पर छोटे पीले रंग के सुंदर फूल आते हैं।

इस पर 'पेलग्रास ब्लू' नामक तितली अक्सर मंडराते हुए देखी जा सकती है। चांगेरी पेलग्रास ब्लू नामक तितली का पोषक पादप है। यह तितली इसकी पत्तियों पर अंडे देती है। इसकी पत्तियां बड़ी सुंदर होती है। पत्तियां मेथी की भाजी की तरह परन्तु तीन-तीन जोड़ो में पाई जाती हैं और स्लीपिंग गति दर्शाती है। इसके पीले रंग के छोटे-छोटे फूल भी बहुत ही सुंदर होते हैं। लगभग पूरे वर्ष इस पर

चगेरी की पत्तियां

चांगेरी के फूल

चांगेरी की फलियां

फूल आते हैं। फूल लगभग दो से.मी. लंबा एक केपसूल होता है। इसका पका फल स्पर्श संवेदी होता है। छूते ही ढेरो बीज चारो दिशाओं में बिखर जाते हैं।

आमतौर से छोटे-छोटे पीले फूलों वाली बूटी पाई जाती है। इसकी मुख्यत: दो प्रजातियां पाई जाती हैं। छोटी चंगेरी एवं बड़ी चंगेरी। मुख्यत: छोटी चंगेरी का प्रयोग चिकित्सा में किया जाता है।

उपयोग

❖ यह जंगली पौधा (खरपतवार) कई तरह के विकारो से बचाव में सहायक होता है। चंगेरी का आयुर्वेदिक, चरक संहिता और सुश्रुत संहिता में भी वर्णन किया गया है। इससे मिलने वाले लाभ चौकाने वाले हैं। चांगेरी के छोटे पत्ते औषधीय गुणों से भरपूर होते हैं। साथ ही यह काफी पोष्टिक भी होते हैं। कई क्षेत्रो में इसे तिन पत्तिया के नाम से जाना जाता है। इसके औषधीय गुणो को आयुर्वेद में भी स्वीकार किया गया है।

❖ चांगेरी के पत्तो को सलाद के रूप में, सब्जी बनाकर तथा चटनी बनाकर खाया जाता है।

❖ चांगेरी विटामिन 'सी' से भरपूर होता है। शरीर में विटामिन सी की कमी से कई तरह की परेशानियां होने का खतरा रहता है। इसका सेवन करने से शरीर में विटामिन सी की पूर्ती की जा सकती है। बच्चे भी इसकी खटटी पत्तियां खाना पसंद करते हैं।

❖ इमली के स्थान पर इसका खटाई के लिये उपयोग किया जाता है।

❖ यह स्कर्वी, घावों और सूजन, पेट दर्द, यूरिन इंफेक्षन, जलन, चर्म रोग, सिर दर्द जैसी परेशानियों को दूर करने में मददगार होता है।

❖ इसका खट्टापन ऑक्जेलिक एसिड के कारण होता है। मधुमक्खी व अन्य कीटो के काटने पर काटी हुई जगहों पर इसकी पत्तियों को रगड़ने से दर्द व जलन जाती रहती है।

❖ इसका स्वभाव ठंडा होता है। यहप्यास को शांत रखती है। लू लग जाने पर इसकी चटनी बनाकर खाने से आराम मिलता है।

❖ मसूड़ो के रोग से दिलाए राहत :- चांगेरी में कसैला रस होता है जो दांतों और मसूड़ों को आराम देता है। इसी गुण के कारण चांगेरी को टूथ-पेस्ट के घटक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। चंगेरी के पत्तों के रस का गरारा करने से मंसूड़ो की सूजन, मसूड़ो से खून आना, दर्द आदि रोगो में आराम दिलाने में मदद करता है। अगर किसी बीमारी के साइड इफेक्ट की वजह से या किसी बीमारी के कारण मूँह की बदबू की परेशानी से ग्रस्त है तो चांगेरी के दो-तीन पत्तों को चबाने से मुँह की दुर्गंध या बदबू दूर होती है। इसके लिये चंगरी के पत्तो को सुखाकर, चूर्ण कर मंजन करने से दांत संबधी बीमारियों से राहत मिलती है। मसूड़ों की सूजन कम करने में भी चांगेरी मदद कर सकता है। दरअसल इसमें मौजूद विटामिन 'सी' मसूड़ों में होने वाली परेशानी को दूर करने में असरकार साबित हो सकता है।

❖ 20 से 40 मि.ली. चांगेरी के पत्तो का रस पिलाने से धतुरे का नशा उतरता है।

❖ चांगेरी के इस्तेमाल से लिवर और पाचन के विकारों को दूर किया जा सकता है। 'सेंटर कांऊसिल फॉर रिसर्च इन आयुर्वेदिक साइंस' के मुताबिक चांगेरी में हिपेटोप्रोटक्टिव गुण पाया जाता है। चांगेरी में मौजूद यह गुण लिवर को डेमेज होने से बचा सकता है। साथ ही यह लीवर की अन्य परेशानियों को दूर कर सकता है। अत: लीवर संबधी परेशानियों के लिये एक्सपर्ट के सलाहनुसार इसका सेवन कर सकते हैं।

❖ पाचन से जुड़ी परेशानियों को दूर करने के लिये भी चांगेरी का इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे पाचन शक्ति को मजबूत किया जा सकता है। अगर आपको उलटी-मतली की शिकायत है तो चांगेरी का सेवन आपके लिये लभकारी हो सकता है। आयुर्वेद के सलाहनुसार इसका सेवन लाभकारी होता है।

❖ सेंटर कांउसिल फॉर रिसर्च इन आयुर्वेदिक साइंस के मुताबिक यह एंटि-अल्सर गुणों से भरपूर होता है। एसे में अगर आप चांगेरी का सेवन करते हैं तो अल्सर जैसी परेशानियों से बचाव किया जा सकता है।

- आजकल के रफ्तार भरी जिंदगी में असंतुलित खान-पान रोजमर्रा की समस्या बन गई है। जिसका पहला असर पेट पर पड़ता है। चांगेरी का घरेलु इलाज पेट संबधी समस्याओं के लिये बहुत लाभकारी होता है। 20-40 मि.ली. चांगेरी के पत्ते के काढ़े में 60 मि. ग्रा. भुनी हींग मिलाकर सुबह-शाम पिलाने से पेट दर्द में जल्द आराम मिलता है।

- यूरिन इंफेक्षन की समस्या होने पर भी चंगेरी का इस्तेमाल किया जा सकता है। रिसर्च के मुताबिक यह एंटी वायरल, एंटी बैक्टीरियल गुणो से भरपूर होता है। जो यूरिन इंफेक्षन की समस्याओं से बचाव करने में मददगार होता है।

- रिसर्च के अनुसार चांगेरी एंटि-इंफ्लेमेटरी, एंटी-फंगल, एंटी माइक्रोबियल जैसे गुणो से भरपूर होती है। स्किन में होने वाली समस्याओं (स्किन-इंफेक्षन) को दूर करने में भी चांगेरी का इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके बीज, पत्तियों व फूलों के इस्तेमाल से स्किन पर जलन, रैशेज और लालिमा को दूर किया जा सकता है। चांगेरी में मौजूद इन गुणों से चर्म रोगों से बचा जा सकता है। स्किन इंफेक्षन में एक्सपर्ट की सलाहनुसार चंगेरी का इस्तेमाल किया जा सकता है।

सारांश

चांगेरी के इस्तेमाल से स्वास्थ्य को कई फायदे होते हैं जैसे पेट में दर्द, इंफेक्षन, बुखार, बवासीर इत्यादि परेशानियों को दूर करने में चांगेरी फायदेमंद हो सकता है। लेकिन इसका अधिक मात्रा में सेवन नहीं करना चाहिए। चांगेरी के अधिक मात्रा में सेवन करने से परेशानी भी हो सकती है। जैसे स्किन एर्लजी, दस्त, आँखों में जलन, पेशाब ज्यादा आना इसलिये विशेषज्ञ की सलाहनुसार ही चांगेरी का सेवन करना चाहिए।

सरकारी दफ्तर की चाय

राहत की घूँट

सुबह-सुबह जब दफ्तर आए,
फाइलों का पहाड़ सामने पाए।
ना क्लर्क भागे कैंटीन,
ना चपरासी छोड़ लगाए,
हर कोने से आती महक
मन को महकाए।
इतने में आई खुशबू निराली,
तो सामने आई चाय की प्याली।
कहने को काम है सबसे बड़ा,
पर चाय के बिना सब अधूरा पड़ा।
कल की रिपोर्ट अभी भी अधूरी,
ऊपर की मीटिंग की तैयारी है जरूरी।
ना मीटिंग हुई शुरू,
ना रिपोर्ट आई हाथ,
चाय ने आकर
बचा ली बिगड़ती बात।

हर पौधारोपण में अब
पहली मांग यही हो जाए,
नीम, खेजड़ी संग
चाय का पौधा भी आए।
हर मीटिंग से पहले
सब उसकी पत्तियाँ तोड़ लाए,
चाय पिएं और चैन से मुस्कुराएँ।
प्याली में भरकर आते हैं मुद्दे,
हर सिप में छुपे हैं दफ्तर के किस्से।
बॉस की डांट हो या दिन की थकान,
चाय देती है काम को रफ्तार।
सरकारी हो या निजी काम,
चाय ही है
दफ्तर का असली काम।

यशपाल सोलंकी
आफरी, जोधपुर

संस्थान की प्रमुख गतिविधियाँ (जुलाई–दिसम्बर, 2025)

❖ आफरी, जोधपुर द्वारा भारत सरकार के ''एक पेड़ माँ के नाम'' अभियान एवं ''मिशन लाइफ'' के अंतर्गत दिनांक 7 जुलाई को वन महोत्सव मनाया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री किशन सिंह जसोल, सेवानिवृत भारतीय राजस्व सेवा अधिकारी ने अपने उद्बोधन में बताया कि उच्च गुणवता वाली देसी प्रजातियों के वृक्षारोपण तथा पारम्परिक जैवविविधता क्षेत्र ओरण गोचर के संरक्षण के साथ पर्यावरण रोधी प्रजातियों के उन्मूलन से ही पर्यावरण संरक्षण संभव है। कार्यक्रम के अध्यक्ष निदेशक डॉ. तरूण कान्त ने प्रतिबद्धता पूर्वक पर्यावरण क्षेत्र में किए जा रहे प्रयासों को जन जन तक पहुचाने एवं सामुदायिक सहयोग को सफलता के लिये महत्वपूर्ण बताया। वृक्षारोपण कार्यक्रम में आफरी मुख्य परिसर में मुख्य अतिथि एवं अन्य गणमान्यो द्वारा तथा माँतृवन मे आफरी के अधिकारियों ने वृक्षारोपण किया। कार्यक्रम में अतिथियों द्वारा वन एवं पर्यावरण के क्षेत्र में किए गए अनुसंधान कार्यो पर तीन पेम्फलेट का भी विमोचन किया गयाद्य इस कार्यक्रम में डॉ. संगीता सिंह, समूह समन्वयक शोध, रमेश बिश्नोई, भावसे, प्रभागाध्यक्ष, विस्तार एवं आफरी अन्य अधिकारी/वैज्ञानिक/कार्मिक उपस्थित थे।

❖ दिनांक 6 से 8 अगस्त, 2025 के दौरान पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय भारत सरकार द्वारा वित्त पोषित भारतीय वन सेवा अधिकारियों हेतु तीन दिवसीय कार्यशाला ''इंटीग्रेटेड एप्रोच फॉर सस्टेनएबल डेवलपमेंट ऑफ फ्रजाइल डेजर्ट इकोसिस्टम'' विषय पर आयोजित की गयी। कार्यक्रम का शुभारम्भ मुख्य अतिथि माननीय अतुल भंसाली, विधायक जोधपुर शहर ने दीप प्रज्जवलित कर किया। इस कार्यशाला में देशभर से भारतीय वन सेवा के अधिकारियों भाग लिया। विभिन्न तकनीकी सत्रों के दौरान विषय विशेषज्ञों ने अपने व्याख्यान प्रस्तुत किए। कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. तरूण कान्त, निदेशक, आफरी ने की। प्रशिक्षण की रूपरेखा डॉ. संगीता सिंह, पाठ्यक्रम समन्वयक ने तैयार की।

❖ संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा निर्देशित हर घर तिरंगा कैम्पेन के तहत आफरी संस्थान द्वारा एक तिरंगा रैली का आयोजन किया गया। इस रैली में संस्थान के निदेशक के मार्गदर्शन में आफरी के अधिकारियों, कार्मिकों एवं शोधार्थियों ने उत्साह के साथ भाग लिया और सभी ने एक तिरंगा सैल्फी www.harghartiranga.com पर अपलोड किया।

❖ 79वां 'स्वतंत्रता दिवस' आफरी, जोधपुर द्वारा हर्षोल्लास से मनाया गया। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ. तरुण कान्त ने

ध्वजारोहण किया। कार्यालय में उत्कृष्ट कार्यों के लिए श्री आर.के. गुप्ता, मुख्य तकनीकी अधिकारी, प्रभारी सुविधा एवं सेवा प्रभाग एवं श्री करनाराम चौधरी, मुख्य तकनीकी अधिकारी को निदेशक डॉ. तरुण कान्त द्वारा शुष्क वन अनुसंधान संस्थान का भा.वा.अ.शि.प. उत्कृष्ट कर्मचारी पुरस्कार 2024-25 प्रदान किया गया।

❖ दिनांक 20.08.2025 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति-2 काजरी, जोधपुर में आयोजित हुई नराकास की छ:माही राजभाषा बैठक के दौरान उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन के लिए शील्ड मूल्यांकन में आफरी को द्वितीय स्थान प्राप्त होने पर संस्थान के निदेशक डॉ. तरुण कांत को नराकास- 2 के अध्यक्ष द्वारा शील्ड वप्रमाण पत्र प्रदान किए गए इसके अतिरिक्त संस्थान के श्री अजय वशिष्ठ, कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी को दो विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रथम एवं द्वितीय स्थान प्राप्त होने पर पुरस्कार व प्रमाण पत्र प्रदान किए गए।

❖ दिनांक 22 अगस्त, 2025 को पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा संचालित कैम्पा परियोजना, एआईसीआरपी-24 तथा एआईसीआरपी-26 के ''एकीकृत अनुसंधान परिणामों के प्रसार'' विषय पर आयोजित की गई। कार्यशाला का शुभारम्भ मुख्य अतिथि, डॉ. राजेश शर्मा, उप महानिदेशक अनुसंधान एवं विशिष्ट अतिथि डॉ. सुमंत व्यास, निदेशक काजरी, डॉ. जी. सिंह, पूर्व वरिष्ठ वैज्ञानिक, आफरी एवं डॉ. गीता जोशी, सहायक महानिदेशक, मिडिया एवं विस्तार, आई.सी.एफ.आर.ई. रहे। डॉ. तरुण कान्त, निदेशक आफरी ने उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता की। कार्यशाला के प्रथम तकनीकी सत्र में भावना शर्मा, परियोजना, एन पी सी द्वारा 'एआईसीआरपी-24', भारत की बंजर भूमि और रेगिस्तान में वनस्पति आवरण और लोगों की आजीविका को बढ़ाकर मरुस्थलीकरण का मुकाबला करना'' विषय पर व्याख्यान दिया। कार्यशाला के द्वितीय तकनीकी सत्र में डॉ. तरुण कान्त, परियोजना एन पी सी द्वारा ''एआईसीआरपी-26 प्रतिशत नीम का आनुवंशिक सुधार'' विषय पर व्याख्यान दिया गया।

❖ दिनांक 27.08.2025 को आफरी, जोधपुर द्वारा राजकीय उच्च माध्यमिक (बालिका) विद्यालय, जालोरी गेट, जोधपुर तथा 26.08.25 को राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, बासनी स्टेशन, जोधपुर में विधायक शिक्षा का साथी कार्यक्रम में आफरी संस्थान ने सम्मिलित होकर प्रकृति कार्यक्रम का आयोजन किया गया। कार्यक्रम में दोनों विद्यालयों के कक्षा 1 से 12 के 970 विद्यार्थियों को श्री अनिल सिंह चौहान, एसीटीओ, एवं श्री धाना राम,

एसीटीओ, श्री ओम प्रकाश, टीए द्वारा पर्यावरण एवं जैव विविधता संरक्षण में किए जा रहे कार्यों के साथ आफरी द्वारा विकसित तकनीकों एवं मॉडल नर्सरी, गुणवत्ता पौध सामग्री के बारे में व्याख्यान दिया गया।

❖ दिनांक 28 अगस्त, 2025 को भा.वा.अ.शि.प.-शुष्क वन अनुसंधान संस्थान, (आफरी) जोधपुर द्वारा प्रदर्शन ग्राम, मोहनगढ़, जैसलमेर के अंतर्गत कृषि विज्ञान केंद्र, जैसलमेर में ''पश्चिमी राजस्थान के इंदिरा गांधी नहरीय क्षेत्र में आजीविका संबल के लिए उपयुक्त कृषि वानिकी मॉडल'' विषय पर वन विभाग राजस्थान के क्षेत्र पदाधिकारियों एवं किसानों के लिए तीन दिवसीय (28 से 30 अगस्त, 2025 तक) प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के समन्वयक डॉ. बिलास सिंह, मुख्य तकनीकी अधिकारी, आफरी थे।

❖ **शोध परामर्शी समूह की बैठक:** आफरी, जोधपुर में दिनांक 10.9.2025 को आयोजित की गई। यह परामर्शी बैठक विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा विकसित नई परियोजना की व्यवहार्यता का मूल्यांकन करने के लिए डॉ. ए.के.त्रिपाठी, निदेशक, आफरी की अध्यक्षता में आयोजित की गई। हाइब्रिड मोड में आयोजित इस परामर्शी बैठक में डॉ. पी.एस. रावत, अतिरिक्त महानिदेशक ने अपने उदबोधन में पर्णधारकों की एवं क्षेत्रीय आवश्यकता अनुरूप नवीन शोध परियोजनाओं को क्रियान्वित करने का आव्हान किया। मुख्य अतिथि रावल किशन सिंह जसोल, प्रगतिशील किसान व पर्यावरणविद रहे। परामर्शी बैठक की सचिव डॉ. संगीता सिंह, समूह समन्वयक (शोध) ने प्रस्तुत परियोजनाओं की सूची एवं उनके मुल्यांकन क्रियाविधि को बताया। तीन प्रमुख अनुसन्धान क्षेत्रों पर आधारित कुल 10 नवीन परियोजनाओं को आफरी के विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किया गया। संस्थान में संचालित की जा रही प्लान परियोजनाओं की उपलब्धियों को परियोजना अन्वेषकों द्वारा प्रस्तुत किया गया।

❖ **हिंदी पखवाड़ा:** आफरी जोधपुर में दिनांक 14 से 29 सितंबर, 2025 तक 'हिन्दी पखवाड़ा' का आयोजन किया गया। हिन्दी पखवाड़ा के दौरान आयोजित हुई टिप्पण, निबंध, प्रश्नोत्तरी, आशुभाषण, टंकण आदि प्रतियोगिताओं के विजेताओं को समापन समारोह के दिन प्रमाण-पत्र प्रदान कर उनका उत्साह वर्धन किया गया। संस्थान के कनिष्ठ अनुवाद अधिकारी अजय वशिष्ठ ने कार्यक्रम का संचालन किया।

❖ **वृक्ष उत्पादक मेला:** आफरी, जोधपुर के तत्वावधान में दिनांक 23 सितम्बर, 2025 को वृक्ष उत्पादक मेला का आयोजन डॉ. टी.

एस.राठौड़,पूर्व निदेशक आफरी के मुख्य आतिथ्य में आयोजित किया गया जिसकी अध्यक्षता डॉ. ए.के.त्रिपाठी, निदेशक, आफरी ने की। इस कार्यक्रम में लगभग 300 किसानों ने भाग लिया। कार्यक्रम में पर्यावरण के क्षेत्र में विशिष्ट कार्य करने वाले पर्यावरणविद्, किसानों, एवं एन.जी.ओ.को प्रशंसा-पत्र प्रदान कर सम्मानित किया गया। कार्यक्रम का संयोजन एवं परिकल्पना प्रभागाध्यक्ष रमेश विश्नोई,भा.व.से ने करी।

❖ **वन मृदा स्वास्थ्य कार्डः** AICRP-22 प्रोजेक्ट के तहत 25 सितंबर 2025 को, गुजरात के वन मृदा स्वास्थ्य कार्ड को आधिकारिक तौर पर वन मंत्री श्री मुल्लू भाई बेरा ने गांधीनगर में आयोजित एक कार्यक्रम में जारी किया। इस कार्यक्रम में वन विभाग और अनुसंधान संस्थानों के कई विशिष्ट अतिथि और वरिष्ठ अधिकारी शामिल हुए। आफरी, जोधपुर के निदेशक डॉ. आशुतोष त्रिपाठी ने गुजरात के वनों से संबंधित अनुसंधान क्षेत्र में मृदा स्वास्थ्य कार्ड की यात्रा और महत्व के बारे में विस्तार से बताया। गुजरात के वन मृदा स्वास्थ्य कार्ड जारी होने के मौके पर, मिट्टी की उर्वरता और वन मृदा स्वास्थ्य कार्ड की प्रैक्टिकल उपयोगिता के बारे में फ्रंटलाइन वन कर्मचारियों के ज्ञान और कौशल को बढ़ाने के लिए एक ट्रेनिंग प्रोग्रायों आयोजित किया गया। इस ट्रेनिंग में गुजरात भर से फ्रंटलाइन वन कर्मचारियों सहित कुल 51 प्रतिभागियों ने भाग लिया। भावाअशिप-शु.व.अ.स. की वैज्ञानिक श्रीमती भावना शर्मा एक विस्तृत व्याख्यान दिया गया जिसमें मिट्टी की उर्वरता और गुजरात की मिट्टी से संबंधित विभिन्न मापदंडों पर ध्यान केंद्रित किया गया था। AICRP-22 प्रोजेक्ट के तहत ICFRE-AFRIus राजस्थान फॉरेस्ट्री एंड वाइल्डलाइफ ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट (RFWTI), जयपुर के सिल्वीकल्चर और रिसर्च विंग के स्टाफ के लिए राजस्थान वन के फॉरेस्ट सॉइल हेल्थ कार्ड पर एक ट्रेनिंग प्रोग्राम आयोजित किया गया। डॉ. शरद कोठारी ने वानिकी मृदा स्वास्थ्य एवं मृदा पोषक प्रबंधन विषय पर व्याख्यान प्रस्तुत किया।

❖ दिनांक 26 नवम्बर, 2025 को आफरी के संगोष्ठी कक्ष में संविधान दिवस का आयोजन किया गया। कार्यक्रम की शुरूआत सविंधान प्रस्तावना के समक्ष दीप प्रज्वलन तथा संविधान की उद्देशिका के वाचन से किया गया । आमंत्रित अधिवक्ता सुश्री धीरज लोहरा ने अपने संभाषण के दौरान भारतीय संविधान के इतिहास, निर्माण प्रक्रिया एवं संविधान सभा के सभी गणमान्यों के योगदान पर विस्तृत प्रकाश डाला। कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ, तरुण कान्त वैज्ञानिक जी ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि भारत का संविधान केवल एक कागजी दस्तावेज नहीं बल्कि यह

हमारे महान राष्ट्र की आत्मा है जी न्याय, स्वतंत्रता और बंधुत्व के आदेशों को समेटे हुए है। इस अवसर संस्थान के प्रभागाध्यक्ष अधिकारियों, कर्मचारियों, शोधार्थियों ने सतर्कता जागरूता की शपथ ग्रहण की।

❖ आफरी में 12 से 14 नवम्बर 2025 तक ''प्राकृतिक समाधानों से क्षतिग्रस्त भूमि का पुनर्वास एवं मरुस्थलीकरण का निराकरण'' पर प्रशिक्षण का आयोजन विद्यार्थियों, पर्यावरणविदों, कृषकों एवं विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों हेतु किया गया जिसमे कुल 41 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया। प्रशिक्षण का आयोजन एवं रुपरेखा डॉ. संगीता सिंह, समूह समन्वयक (शोध) एवं पाठ्यक्रम निदेशक ने करी

❖ दिनांक 5 दिसंबर 2025 को आफरी जोधपुर और हिंदुस्तान कॉपर लिमिटेड (एचसीएल), खेतड़ी के बीच खेतड़ी कॉपर कॉम्प्लेक्स (केसीसी) खेतड़ी में चांदमारी खदान पट्टे के पास 15 हेक्टेयर क्षेत्र में स्थित खदान के पुनर्भरण हेतु एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए। समझौता ज्ञापन पर भावाअशिप-शु.व.अ.स. के निदेशक डॉ. ए.के. त्रिपाठी और एचसीएल, केसीसी के कार्यकारी निदेशक श्री जी.डी. गुप्ता ने हस्ताक्षर किए। आफरी निदेशक और उनकी टीम ने इस क्षेत्र का दौरा भी किया। इस परियोजना में, आफरी, चांदमारी खदान पट्टे के निकट पथरीले स्थलों पर वृक्षारोपण के लिए एचसीएल को तकनीकी और वैज्ञानिक मार्गदर्शन प्रदान करेगा।

❖ आफरी, जोधपुर में दिनांक 17 से 19 दिसंबर 2025 तक सेंटर ऑफ एक्स्सिलेंस, सस्टेनेबल लैंड मैनेजमेंट, भा.वा.अ.शि.प. देहरादून (CoSLM, ICFRE) द्वारा वित् पोषित तीन दिवसीय प्रशिक्षण ''क्षरित भूमि के पुनर्वन्यीकरण एवं मरुस्थलीकरण से निपटने की रणनीतियां'' विषय पर आयोजित किया गया। प्रशिक्षण के मुख्य अतिथि डॉ. पंकज भारद्वाज, निदेशक, नेशनल इंस्टिट्यूट फॉर इंप्लीमेंटेशन रिसर्च ऑन नॉन-कम्युनिकेबल डिजिजेस, जोधपुर एवं विशिष्ट अतिथि डॉ. संजीव कुमार, Head, CoSLM, ICFRE थे। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में राजस्थान एवं गुजरात के वन विभाग के अधिकारी, राष्ट्रीय असंचारी रोग कार्यान्वयन अनुसन्धान संस्थान जोधपुर, विभिन्न विश्वविद्यालयों, उद्यानिकी विभाग जोधपुर, स्वयं सेवी समूह के कुल 21 प्रतिभागीयों ने हिस्सा लिया। प्रशिक्षण कार्यक्रम के अध्यक्ष, डॉ. आशुतोष कुमार त्रिपाठी, निदेशक आफरी एवं पाठ्यक्रम निदेशक डॉ. तरुण कान्त, वैज्ञानिक-जी थे।

- **प्रकृति कार्यक्रमः** पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के आदेशानुसार भारतीय वानिकी अनुसन्धान शिक्षा परिषद्, देहरादून के अधीनस्थ संस्थानों द्वारा उच्च माध्यमिक तक के केंद्रीय विद्यालय (के. वि.) एवं जवाहर नवोदय विद्यालयों (जे. एन.वि.) में पर्यावरण की प्रति सजगता बढ़ाने हेतु समय समय पर ''प्रकृति कार्यक्रम'' आयोजित किए जाते हैं। इसी कड़ी में आफरी द्वारा पीएम श्री केन्द्रीय विद्यालय (बीएसएफ), मंडोर, जोधपुर, पीएम श्री केन्द्रीय विद्यालय क्रमांक-1, एएफएस, जोधपुर, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, बासनी स्टेशन, जोधपुर एवं पीएम श्री राजकीय उच्च माध्यमिक, चामू, जोधपुर सहित अन्य विद्यालयों में प्रकृति कार्यक्रम आयोजित किये गए। प्रकृति कार्यक्रम के दौरान कुल 1203 विद्यार्थियों को विस्तार प्रभाग, आफरी द्वारा संस्थान में विकसित तकनीकों के बारे में बताया एवं अधिकाधिक पौधारोपण, जल तथा मृदा संरक्षण के विषय मे विद्यार्थियों को प्रेरित किया एवं प्रकृति कार्यक्रम के तहत स्वयं विद्यार्थियों से पोटिंग मिश्रण तैयार करवाकर पॉलीथीन बैग में छात्रों द्वारा भरकर बीज रोपण एवं कटिंग लगाने की तकनीक के माध्यम से विद्यालयो में नर्सरी स्थापित की गयी । इस कार्यक्रम का उद्देश्य नयी पीढ़ी को पर्यावरण संरक्षण के महत्व से जोड़ते हुए उनमें वैज्ञानिक सोच और व्यवहारिक कौशल विकसित करना है।

- आफरी, जोधपुर द्वारा वन विज्ञान केन्द्र, झालावाड़ के अंतर्गत उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़ में ''गुणवत्तापूर्ण पौध सामग्री एवं कृषि वानिकी'' विषय पर किसानों एवं वन विभाग के क्षेत्र पदाधिकारियों के लिए दिनांक 18 दिसंबर, 2025 से 20 दिसंबर, 2025 तक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। प्रशिक्षण में 12 किसानों एवं 29 वन विभाग के क्षेत्र पदाधिकारियों ने भाग लिया। विषय विशेषज्ञों के व्याख्यान के माध्यम से प्रशिक्षणार्थियों को विभिन्न विषयों पर जानकारी दी गई। प्रशिक्षण के रुपरेखा एवं समन्वयन डॉ. बिलास सिंह ने किया।

- आफरी, जोधपुर ने पश्चिमी राजस्थान हस्तशिल्प उत्सव जिसका आयोजन 25 दिसंबर 2025 से 4 जनवरी 2026 तक जोधपुर के रामलीला मैदान में किया गया में भाग लिया। इस उत्सव में संस्थान के शोध कार्यों और प्रमुख निष्कर्षों को प्रदर्शित करने के लिए एक स्टॉल लगाया गया। राजस्थान के मुख्यमंत्री माननीय श्री भजनलाल शर्मा ने उत्सव का उद्घाटन किया और आफरी स्टॉल का भी दौरा किया।

पौधों के मन की बात

नवाचार हम सब को पता हैं
फिर क्यों इनसे कतराते हैं
लागत कम करने के बहाने
शोर्टकट अपनाते हैं
लागत कम करने के बहाने
क्षुद्र रूप अपनाते हैं
आप जैसे वनस्पति ज्ञाताओं के अलावा
हम पौधो का दु:ख समझे कौन
एक जगह हमे स्थिर रहना है
जीवन भर रहना है मौन
रासयनिकसंकेतों के माध्यमों से अब हम
संचार तंत्र तीव्रता बढ़ा रहे है
दक्षिण अमेरिका के वाकिंग पाम अब
हमको चलना सिखा रहे हैं
हमारे गुणदेख
सरकारों ने ली जिम्मेदारी
तभी तो भारत सरकार ने
बनाया है आई.सी.एफ.आर.ई.
हमारे विकास के विशिष्ट उद्देश्य से
हमें आपके हाथो में सौपा
संजीदगी से नवाचार अपनाकर
आपको मिला लोकप्रियता का मौका
प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा के नीचे
अन्य पादप नहीं उग पाते हैं
लेकिन उसी प्रजाति के वहाँ
लाखों में पौधे आते हैं

माँ की छाया पड़ी हो जिस मिट्टी पर
उस सतह की मिट्टी में हमें उगाये
जहाँ हमें स्थानांतरित करेवहां पर भी उसे छिडकाएं
हमारी मां के पते का जीपीएसनाम पट्टिका पर लिखवायें
गड्ढों से लाई मिट्टी में जबपौधशाला में हमें उगाते हो
ऐसा करके तुम हे मानवहमको कमजोर बनाते हो
कृत्रिम पुनरुदभवन परिवेश छोड़
हमको कमजोर बनाते हो
कृत्रिम पुनरुदभवन परिवेश छोड़
जब हम अम्लीय भूमि में जाते हैं
हमारी जड़ों के मूल रोम
उसे छूते ही जल जाते हैं
कोशिश करते हैं जीने की सब
पर कुछ ही बस जी पाते हैं
जो जी जाते हैं वो फिर
मिट्टी को अनुकूल बनाते हैं
पहले पत्ते गिरा गिरा कर
फिर उसमे बीज गिराते हैं
इसलिये हमे उगाने वालो
इतनी हम पर कृपा करो
मातृछाया की मिट्टी
नहीं ला सकते हो तो
माँसी छाया की मिट्टी भरो

अनिल शर्मा
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
आफरी, जोधपुर

अरावली री पुकार

अरावली री पहाड़ियां, धरती रो गहना
सूरज-सूं भी झिलमिलवै, चांद सू भी सजै।
जंगलों की छांव, पानी रा झरना
अरावली बिना सूना लागे,
हर एक नगर- गांव अपार।।

पक्षी गावे गीत, नदियां बहावे रस
धरती मां जीवन रो संगम
अरावली रो अद्‌भुत नजारों
पेड़ों की छाया, मिट्टी की खुशबू
जानवर झुमे, पक्षी शोर मचावें।।

सरकार रो लालच, काटे है जंगल पहाड़
अरावली धरती रो हृदय दुखै
सुनो म्हारी पुकार अरावली बचाओ, धरती बचाओ
पानी माटी और प्राणवायु बचाओ।।

रखो जंगल रखो जंगली जानवर का आसरो
रखों तेरी शान ,अरावली ही धरती रा फैफडा।
रखो धरती पर हरियाली, बना लो प्रगति को दोस्त
अरावली बिना राजस्थान सब बेकार।।

आओ मिलकर करें प्रण, अरावली रो बचाव
धरती, जल और जीवन रो सदा-सदा साथ निभावो।
ओ पावन पहाड़ियां, हमारे राजस्थान की शान
अरावली बचाओ, बचाओ हर जीव रो मान।

विज्ञान की छाया में वृक्ष

हरे पत्ते की नाजुक परत
सुर्य की किरणों से करती बातचीत।
फोटो सिंथेसिस की चुप्पी में
सुगंधित क्लोरोफिल गाती है गीत।

जड़ें मिट्टी में गहराई तक जाती
नमी और पोषक तत्व खोजती जाती।
साधारण ओर सहयोग का अद्‌भुत विज्ञान
धरती और वायु में संतुलन बनाती जाती ।।

तने में वाहिकाएं, जीवन की धारा
रस बहाएं, हर अंग को सहारा।
पत्ती से हवा में कार्बन दूर करें,
आक्सीजन में जीवन का उपहार भर दें ।।

हर शाख एक प्रयोगशाला सी
जीवों का आश्रय, मौसम की परीक्षा।
विज्ञान के चश्मे से देखो इसे
प्रकृति की गणित और कला का अद्‌भुत मेल।।

सुरेन्द्र देवड़ा (सियारा)
परियोजना सहायक, आफरी
(लेखक : अरावली की पुकार एवं विज्ञान की छाया में वृक्ष)

स्थानान्तरण/कार्य-मुक्त/सेवानिवृत

(अवधि 01 जुलाई 2025 से 31 दिसम्बर 2025 तक)

1. श्री चमन लाल, अनुभाग अधिकारी दिनांक 31.07.2025 को सेवानिवृत हुए।
2. डॉ. हेमलता शर्मा, अनुभाग अधिकारी ने दिनांक 13.08.2025 को कार्यभार ग्रहण किया।
3. डॉ. ए.के. त्रिपाठी, निदेशक ने दिनांक 04.09.2025 को कार्यभार ग्रहण किया।
4. डॉ. विश्वनाथ शर्मा, वैज्ञानिक-सी ने दिनांक 01.10.2025 को कार्यभार ग्रहण किया।
5. श्री हेमन्त कुमार गागल, अवर सचिव ने दिनांक 12.11.2025 को कार्यभार ग्रहण किया।
6. श्री अमित दुहान, एमटीएस ने दिनांक 18.11.2025 को कार्यभार ग्रहण किया।
7. श्री प्रवीण कुमार, एमटीएस को दिनांक 08.08.2025 को कार्यमुक्त किया गया।
8. श्री एस.एन.मुर्ति, वैज्ञानिक-बी को दिनांक 26.09.2025 को कार्यमुक्त किया गया।
9. डॉ. पूजा शर्मा, वैज्ञानिक-सी को दिनांक 06.10.2025 को कार्यमुक्त किया गया।
10. श्री नीरज कुमार गुप्ता, अवर सचिव को दिनांक 31.10.2025 को कार्यमुक्त किया गया।

पदोन्नति

1. डॉ. इल्हाम बानों, वैज्ञानिक-बी की वैज्ञानिक-सी पद पर दिनांक 01.07.2025 को पदोन्नति हुई।
2. श्री सवाई सिंह राजपुरोहित, एमटीएस की तकनीशियन (फील्ड/प्रयोगशाला/अनुसंधान) पद पर दिनांक 01.08.2025 को पदोन्नति हुई।

पत्रिका में प्रकाशन हेतु सामग्री, सुझाव एवं जानकारी निम्न पते पर भेजें

रमेश बिश्नोई, भा.व.से. **(संपादक, आफरी दर्पण)**
प्रभागाध्यक्ष, विस्तार प्रभाग, भा.वा.अ.शि.प.-शुष्क वन अनुसंधान संस्थान (आफरी)
न्यू पाली रोड, जोधपुर 342005
दूरभाषः 0291-2729198 ई-मेल kr171@ifs.nic.in